चौथी दुनिया

www.chauthiduniya.com

हिंदी का पहला साप्ताहिक अख़बार

1986 से प्रकाशित | 27 मार्च– 02 अप्रैल 2017 | नई दिल्ली | हर शुक्रवार को प्रकाशित | Postal Regn. No. DL (ND)-11/6139/2015-17, RNI No. DELHIN/2009/30467

फोटो : प्रभात पाण्डेय

यूपी के पीठाधीश्वर

प्रभात रंजन दीन

उत्तर प्रदेश का मुख्यमंत्री कौन होगा इसे लेकर चुनाव के पहले और चुनाव परिणाम आने के बाद तक तमाम कयासबाजियां होती रहीं और तमाम नेताओं के नाम उछलते रहे, लेकिन भारतीय जनता पार्टी के शीर्ष नेतृत्व ने विधानसभा चुनाव में अथक परिश्रम करने और उस अनुरूप परिणाम देने वाले योगी आदित्यनाथ का नाम 11 मार्च को ही तय कर लिया था. नामों को लेकर तमाम प्रहसन हुए और इन सबके बीच 18 मार्च को योगी को उत्तर प्रदेश विधायक दल का नेता बनाए जाने का प्रस्ताव रख दिया गया और उस पर विधायक दल की सर्व–सम्मति भी हो गई. इस तरह गोरखपुर के सांसद और गोरक्षपीठ के पीठाधीश्वर महंत योगी आदित्यनाथ उत्तर प्रदेश के 21वें मुख्यमंत्री और सर्वाधिक बहुमत वाले प्रथम मुख्यमंत्री हो गए. प्रदेश भाजपा के अध्यक्ष केशव प्रसाद मौर्य और लखनऊ के मेयर दिनेश शर्मा योगी आदित्यनाथ सरकार में उपमुख्यमंत्री रहेंगे.

विधानसभा चुनाव के पहले भी भारतीय जनता पार्टी को यूपी के मुख्यमंत्री का चेहरा चुनने को लेकर घेरा गया था. लेकिन भाजपा ने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के चेहरे पर ही चुनाव में उतरने का फैसला किया. यूपी चुनाव को लेकर बनी भाजपा की शुरुआती कोर–टीम में योगी आदित्यनाथ की केंद्रीय भूमिका रही. इस दरम्यान प्रदेश भर से यह मांग उठने लगी कि योगी को ही मुख्यमंत्री बनाया जाए. इसे लेकर विवाद कुछ इतना बढ़ा कि कुछ दिनों के लिए योगी 'वृष्टिछाया–क्षेत्र' में चले गए. प्रत्याशी चयन पर विचार के लिए बनी चुनाव समिति में भी योगी का नाम शामिल नहीं किया गया. इसके विरोध में हिंदू युवा वाहिनी ने भाजपा के खिलाफ विद्रोह का ऐलान करते हुए समानान्तर उम्मीदवार खड़े करने की घोषणा कर दी. हिंदू युवा वाहिनी के संस्थापक योगी ही हैं, लेकिन उन्होंने बड़े चातुर्य से विद्रोह को रोका भी और नेतृत्व को इसका अहसास भी करा दिया. भाजपा की परिवर्तन यात्रा और प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी व राष्ट्रीय अध्यक्ष अमित शाह की रैलियों के दरम्यान भाजपा नेतृत्व को योगी आदित्यनाथ की व्यापक जन–स्वीकार्यता का अहसास हुआ. मोदी और शाह की रैलियों में जुटी अभूतपूर्व भीड़ का श्रेय भी योगी और उनकी टीम को मिला. बुलंदशहर की सभा में योगी आदित्यनाथ के भाषण के व्यापक प्रभाव पर आलाकमान को मिली खुफिया रिपोर्ट के बाद भाजपा नेतृत्व ने योगी को स्टार प्रचारकों में शामिल किया और जनता पर पड़ रहे असर को देखते हुए प्रचार कार्य के लिए उन्हें अलग से हेलीकॉप्टर भी दे दिया.

अब भाजपा नेतृत्व को चुनाव परिणाम का इंतजार था. माना जाता है कि 60 से अधिक सीटों पर हुई जीत में योगी आदित्यनाथ की महत्वपूर्ण भूमिका रही है. इस ऐतिहासिक जीत के बाद योगी का रास्ता पक्का हो गया था, लेकिन भाजपा नेतृत्व को यूपी की सियासत का तापमान भी लेना था. इस बीच कई नाम उछले. केंद्रीय मंत्री राजनाथ सिंह से लेकर मनोज सिन्हा, केशव प्रसाद मौर्य, सुरेश खन्ना, महेश शर्मा वगैरह वगैरह के नाम भावी मुख्यमंत्री के रूप में सामने आते रहे और उनके समर्थन और विरोध की राजनीति का तापमान आलाकमान को मिलता रहा. चुनाव परिणाम आने के बाद से ही योगी आदित्यनाथ 'लो–प्रोफाइल' में आ गए थे. ऐसा लगा था कि योगी ने मुख्यमंत्री पद की रेस से खुद को अलग कर लिया. लेकिन 'अंडर–करंट' चल रहा था. खुर्राट राजनीतिज्ञ राजनाथ सिंह ने यह सब भांप कर खुद को पहले ही अलग कर लिया. केंद्रीय रेल व संचार राज्य मंत्री मनोज सिन्हा ऊपर–ऊपर भले ही कहते रहे कि वे मुख्यमंत्री की दौड़ में शामिल नहीं हैं, लेकिन उनके चेहरे और शरीर की भाषा उनकी आकांक्षा का भेद खोलती रही. मनोज सिन्हा 18 मार्च को वाराणसी पहुंच भी गए, ताकि आलाकमान का सिग्नल मिले और वे फौरन लखनऊ पहुंच जाएं. पुलिस ने मनोज सिन्हा को बाकायदा सीएम प्रोटोकॉल के तहत 'गार्ड ऑफ ऑनर' देने की तैयारी भी कर ली थी, पर सिन्हा ने उसे रोक कर बुद्धिमानी दिखाई. कुछ ऐसा ही हाल केशव प्रसाद मौर्य का भी हुआ. मुख्यमंत्री बनने की अरुचिकर सियासी घेरेबंदी पर खुद राष्ट्रीय अध्यक्ष अमित शाह को हस्तक्षेप करना पड़ा. इस पर केशव मौर्य पहले तो दिल्ली के अस्पताल में जाकर भर्ती हो गए, लेकिन आलाकमान की सख्ती देख कर अस्पताल से छुट्टी कराई और अपने पैर पीछे समेट लिए.

पर्यवेक्षक के रूप में लखनऊ भेजे गए वेंकैया नायडू और भूपेंद्र यादव घटते–बढ़ते सियासी तापमान का जायजा ले रहे थे और उधर विसात निर्णायक परिणाम पर पहुंचने के लिए तैयार हो रही थी. 18 मार्च को सुबह–सुबह ही योगी आदित्यनाथ को दिल्ली बुलाया गया. योगी को दिल्ली ले जाने के लिए चार्टर विमान भेजा गया था. उसी समय यह साफ हो गया कि योगी उत्तर प्रदेश के भावी मुख्यमंत्री के रूप में देखे जा रहे हैं. योगी को केंद्र में मंत्रिपद का प्रस्ताव देने के लिए चार्टर विमान नहीं भेजा जाएगा. योगी की अमित शाह से विस्तार से वार्ता हुई. सूत्र यह भी कहते हैं कि अमित शाह से मुलाकात के बाद योगी की प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी से मुलाकात हुई. भाजपा के उत्तर प्रदेश प्रभारी ओम माथुर और प्रदेश महामंत्री सुनील बंसल भी दिल्ली में ही थे. भाजपा आलाकमान के निर्णय से सभी नेताओं को अवगत करा दिया गया और सबको साथ ही लखनऊ पहुंचने का निर्देश मिल गया. उसके बाद उक्त सारे नेता योगी आदित्यनाथ के साथ ही दोपहर बाद (शेष पृष्ठ 2 पर)

चौथी दुनिया के 27 फरवरी से 5 मार्च के अंक में प्रकाशित लीड स्टोरी में चौथी दुनिया के प्रधान संपादक संतोष भारतीय ने सबसे पहले बताया था कि योगी आदित्यनाथ उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री बनेंगे, उन्होंने अपनी इस एक्सक्लूसिव स्टोरी में इसका ज़िक्र किया था कि कैसे योगी आदित्यनाथ को दिल्ली बुला कर पार्टी अध्यक्ष ने ये फैसला किया कि योगी आदित्यनाथ को उत्तर प्रदेश में ज्यादा से ज्यादा जगहों पर घुमाया जाए, प्रचार के लिए हेलिकॉप्टर दिया जाए. साथ ही, उनसे यह भी कहा गया था कि अगर हम जीतते हैं, तो आप हमारे अगले मुख्यमंत्री होंगे.

भाजपा की दुविधा

www.chauthiduniya.com
चौथी दुनिया
30 जनवरी– 05 फरवरी 2017
भाजपा की दुविधा

भारतीय जनता पार्टी अपना चेहरा तय नहीं कर पाई है, जिसे मुख्यमंत्री बनाया जा सके. लेकिन पश्चिमी उत्तर प्रदेश की एक सभा में योगी आदित्यनाथ ने जिस तरह का भाषण दिया और उन्हें वहां जैसी प्रतिक्रिया मिली, उससे दिल्ली में बैठे पार्टी अध्यक्ष को ये निर्णय लेना पड़ा कि योगी आदित्यनाथ को उत्तर प्रदेश में ज्यादा से ज्यादा जगहों पर घुमाया जाए. योगी आदित्यनाथ को दिल्ली बुलाया गया. उनके दिल्ली पहुंचने से पहले ये फैसला हो गया था कि उन्हें स्थायी रूप से प्रचार के लिए एक हेलिकॉप्टर दिया जाए, ताकि वे ज्यादा से ज्यादा जगहों पर जाएं. जब वे दिल्ली आए, तो उनसे पार्टी के वरिष्ठ नेताओं ने, खास कर पार्टी अध्यक्ष ने कह दिया कि हम घोषणा तो नहीं कर रहे हैं, लेकिन अगर हम जीतते हैं, तो आप हमारे अगले मुख्यमंत्री होंगे. योगी आदित्यनाथ दिन–रात भारतीय जनता पार्टी के प्रचार में लगे हुए हैं. योगी द्वारा उठाए गए सवाल उत्तर प्रदेश में भारतीय जनता पार्टी को ये आशा दे गए कि चुनाव में ध्रुवीकरण हो जाएगा और मुसलमानों के खिलाफ सारे हिंदू भाजपा को वोट देंगे. हालांकि अब तक ये ध्रुवीकरण नहीं हो पाया है. सारी कोशिशों के बाद भी, शुरू के तीन–चार फेज तक जनता ने ध्रुवीकृत होने से मना कर दिया है. अब आखिरी चरण के लिए कुछ ताकतें ध्रुवीकरण की कोशिशें कर रही हैं. ■

चाय में मक्खी ऐसे गिरी

चौथी दुनिया ब्यूरो

कहावत है कि जब तक चाय मुंह के अंदर न चली जाए, तब तक यह मानना चाहिए कि चाय आपने नहीं पी है. बीच में कभी भी मक्खी गिर सकती है. मनोज सिन्हा की चाय में मक्खी गिर गई. मनोज सिन्हा प्रधानमंत्री के खास पसंद थे. मनोज सिन्हा का सौम्य होना और संचार मंत्रालय को सफलतापूर्वक चलाना ही उनके मोदी के प्रिय होने का कारण बना था. जब संचार मंत्रालय रविशंकर प्रसाद के पास था, तब उसकी आलोचना होती थी. लेकिन जैसे ही मनोज सिन्हा ने उस मंत्रालय को संभाला, संचार मंत्रालय सुर्खियों में आना बंद हो गया. हालांकि समस्याएं बहुत कम नहीं हुईं. उन्होंने जैसे भी मैनेज किया हो, अखबार की सुर्खियों से संचार मंत्रालय हट गया. मनोज सिन्हा का सौम्य चेहरा, उनका विनम्र स्वभाव, सबसे प्यार से मिलने की आदत, अपने विरोधी का हाथ पकड़ कर खड़े रहने की आदत, हर एक से इस अंदाज से मिलना मानो वे उसी को सबसे ज्यादा जानते हों और उसकी इज्जत करते हों, इन्हीं खूबियों ने उन्हें मुख्यमंत्री पद के लिए पसंदीदा चेहरा बनाया था.

मनोज सिन्हा 18 मार्च के पहले ही बनारस आ गए थे. उन्होंने संकट मोचन, काल भैरव और बाबा विश्वनाथ के दर्शन किए. इसके बाद, वे अपने ग्राम देवता का दर्शन करने गांव जाना चाहते थे. मनोज सिन्हा के यहां कोई भी काम ग्राम देवता की पूजा के बिना शुरू नहीं होता. 17 तारीख की रात को शीर्ष गलियारे में चर्चा चली कि मनोज सिन्हा का नाम मुख्यमंत्री पद के लिए अंतिम रूप ले चुका है. मनोज सिन्हा के दोस्त, रिश्तेदार लखनऊ पहुंचने लगे. लेकिन, 18 मार्च की सुबह अचानक स्थिति में परिवर्तन आ गया.

दूसरी तरफ, उत्तर प्रदेश में अति पिछड़े और दलित विधायक एकजुट हो गए थे. प्रदेशभर के अति पिछड़ों में यह संदेश चला गया कि अब केशव मौर्या मुख्यमंत्री बनेंगे. बहुत सारी जगहों पर लड्डू बांटे गए. अति पिछड़े और यादव समाज के अलावा जितने पिछड़े समाज थे, उन सबने मान लिया कि इस बार मुख्यमंत्री उन्हीं का प्रतिनिधि होगा. दिल्ली में पूरा आकलन हुआ, तो केंद्रीय नेतृत्व को लगा कि योगी आदित्यनाथ की उपेक्षा भाजपा के भविष्य के लिए ठीक नहीं होगा. चाय में मक्खी गिरने का अहसास लेकर मनोज सिन्हा बनारस से दिल्ली वापस चले गए. अब मनोज सिन्हा को केंद्र में कैबिनेट स्तर का मंत्री बनाया जा सकता है. 18 मार्च की सुबह ही योगी आदित्यनाथ गोरखपुर से दिल्ली बुलाए गए. दिल्ली में स्टेज सेट होने के बाद योगी आदित्यनाथ, ओम माथुर, सुनील बंसल, केशव मौर्या सब एक साथ ही दिल्ली से लखनऊ पहुंचे. ■

खाता ना बही, जो सरकार कहे वही सही | P-4

भाजपा बलपूर्वक कश्मीरियों के आंदोलन को कुचल पाएगी! | P-5

तटबंध निर्माण के ख़िलाफ़ उभरता जनाक्रोश | P-6

यूपी के पीठाधीश्वर

पृष्ठ 1 का शेष

लखनऊ पहुंचे. नव निर्मित सचिवालय 'लोकभवन' पहुंचने के पहले वीवीआईपी गेस्ट हाउस में भी थोड़ी देर नेताओं के बीच मंत्रणा हुई. उसके बाद वे 'लोकभवन' पहुंचे. विधायक दल की बैठक के पहले केंद्रीय मंत्री वेंकैया नायडू ने योगी आदित्यनाथ का नाम रखा, जिसे विधायक दल की बैठक में सुरेश खन्ना ने औपचारिक प्रस्ताव के रूप में प्रस्तुत किया. केशव प्रसाद मौर्य ने इस प्रस्ताव का समर्थन किया और भाजपा विधायक दल ने करतल ध्वनि से योगी को अपना मुख्यमंत्री चुन लिया. योगी ने केशव प्रसाद मौर्य और दिनेश शर्मा को उपमुख्यमंत्री के रूप में चुनने की घोषणा की. पार्टी के उपाध्यक्ष दिनेश शर्मा को 17 मार्च की रात को ही दिल्ली बुला कर आलाकमान के निर्णय से अवगत करा दिया गया था.

उत्तर प्रदेश में सर्वाधिक बहुमत प्राप्त प्रथम मुख्यमंत्री बनने वाले योगी आदित्यनाथ के व्यक्तित्व और उनकी पृष्ठभूमि पर भी थोड़ी बात करते चलें. सियासी समीकरणों और जोड़तोड़ पर बाद में चर्चा करेंगे. गोरक्षपीठ के पीठाधीश्वर महंत अवैद्यनाथ ने अपने प्रिय शिष्य योगी आदित्यनाथ को 15 फरवरी 1994 को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया था और योगी का दीक्षाभिषेक हुआ था. महंत अवैद्यनाथ रामजन्मभूमि आंदोलन के प्रणेता थे. उनके दिवंगत होने के बाद योगी आदित्यनाथ गोरखपुर स्थित गोरक्षपीठ के पीठाधीश्वर बने. 5 जून 1972 को उत्तराखंड (तब यूपी) के पौड़ी जनपद स्थित यमकेश्वर ब्लॉक के पंचूर गांव में जन्मे अजय सिंह 22 साल की उम्र में संन्यासी बन गए और उनका संन्यासी नाम आदित्यनाथ पड़ा. विज्ञान के स्नातक योगी आदित्यनाथ छात्र जीवन में भी और संन्यासी होने के बाद भी विभिन्न राष्ट्रवादी आंदोलनों से जुड़े रहे. छुआछूत के खिलाफ उन्होंने व्यापक आंदोलन चलाया. धार्मिक कट्टरता के आरोपों के बीच अपना राजनीतिक-सामाजिक व्यक्तित्व गढ़ने वाले योगी भारत की सनातन संस्कृति को जर्जर करने वाले तत्वों के खिलाफ लगातार संघर्ष करते रहे. योगी ने व्यापक पैमाने पर हिन्दुओं को संगठित करने का काम किया और सवाल उठाते रहे कि मुस्लिमों को संगठित करना और उनकी हिमायत करना अगर धर्म-निरपेक्षता है, तो हिन्दुओं को संगठित करना धार्मिक कट्टरता कैसे हो गई? अपने अभियान को जारी रखते हुए योगी ने 1998 में लोकसभा का चुनाव लड़ा और 26 वर्ष की उम्र में ही सांसद बने. योगी ने अपने संसदीय क्षेत्र के तकरीबन 1500 ग्रामसभाओं का हर साल दौरा किया और वहां विकास के विभिन्न कार्यक्रमों की व्यक्तिगत रूप से निगरानी करते रहे. इस वजह से वे गोरखपुर संसदीय क्षेत्र से लगातार सांसद चुने जाते रहे. 2014 के लोकसभा चुनाव में भी योगी लोकसभा का चुनाव जीते. अब मुख्यमंत्री बनने के बाद वे सांसद पद से इस्तीफा देंगे और विधायक का चुनाव लड़ेंगे. संसद में भी योगी अपनी सक्रिय भागीदारी के कारण जाने जाते रहे हैं. केंद्र सरकार के विभिन्न मंत्रालयों की संसदीय समिति के भी वे सदस्य हैं. योगी दर्जनों शैक्षणिक संस्थाओं के भी संस्थापक हैं. विश्व हिन्दू महासंघ ने योगी को अन्तरराष्ट्रीय उपाध्यक्ष बनाया था. 1997, 2003, 2006 में गोरखपुर में और 2008 में तुलसीपुर (बलरामपुर) में विश्व हिन्दू महासंघ का अन्तर्राष्ट्रीय अधिवेशन आयोजित कर योगी काफी सुर्खियों में आए थे. सनातन धर्म और संस्कृति पर योगी ने कई किताबें भी लिखी हैं. इनमें 'यौगिक षटकर्म', 'हठयोग: स्वरूप एवं साधना', 'राजयोग: स्वरूप एवं साधना', 'हिन्दू राष्ट्र नेपाल' जैसी पुस्तकें प्रमुख हैं. गोरक्षपीठ से प्रकाशित कई पत्र-पत्रिकाओं का संपादन भी योगी करते रहे हैं. योगी आदित्यनाथ भ्रष्टाचार के खिलाफ सख्ती से खड़े रहे हैं और गोरखपुर को अपराधियों-माफियाओं से मुक्त कराने में योगी की केंद्रीय भूमिका रही है. योगी के प्रभाव के कारण ही पूर्वांचल में आतंकवादी और राष्ट्रविरोधी गतिविधियां पनप नहीं पाईं. योगी की राजनीति में हिंदुत्व एक सूत्री अभियान रहा है. लव-जेहाद पर अपने कट्टर बयान की वजह से योगी विवादों में भी रहे और सुर्खियों में भी. लव-जेहाद पर योगी आदित्यनाथ के तीखे बयान और लव-जेहाद के खिलाफ एंटी-रोमियो-स्क्वॉड के गठन के ऐलान ने भी उन्हें काफी विवादास्पद रूप से मशहूर किया. पूर्वांचल में उन्होंने धर्म परिवर्तन के खिलाफ भी मुहिम छेड़ रखी थी. गोरखपुर में उन्होंने कई मुहल्लों के नाम बदलवा दिए. उर्दू बाजार का नाम बदलकर हिंदी बाजार कर दिया गया. अली नगर को आर्यनगर बना दिया गया. आपको याद ही होगा कि योगी ने योग को लेकर कहा था कि जो लोग योग का विरोध कर रहे हैं, उन्हें भारत छोड़ देना चाहिए. जो लोग सूर्य नमस्कार नहीं मानते उन्हें समुद्र में डूब जाना चाहिए. लेकिन बदलते दौर में जैसे-जैसे धर्मनिरपेक्षता और प्रगतिवाद की नकली एकपक्षीय परिभाषाएं एक्सपोज़ होती गईं, योगी आदित्यनाथ का कद बढ़ता गया. विवादों में रहने के बावजूद योगी की राजनीतिक-सामाजिक ताकत बढ़ती ही चली गई.

फोटो : प्रभात पाण्डेय

गोरक्षपीठ के पीठाधीश्वर महंत अवैद्यनाथ ने अपने प्रिय शिष्य योगी आदित्यनाथ को 15 फरवरी 1994 को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया था और योगी का दीक्षाभिषेक हुआ था. महंत अवैद्यनाथ रामजन्मभूमि आंदोलन के प्रणेता थे. उनके दिवंगत होने के बाद योगी आदित्यनाथ गोरखपुर स्थित गोरक्षपीठ के पीठाधीश्वर बने. 5 जून 1972 को उत्तराखंड (तब यूपी) के पौड़ी जनपद स्थित यमकेश्वर ब्लॉक के पंचूर गांव में जन्मे अजय सिंह 22 साल की उम्र में संन्यासी बन गए और उनका संन्यासी नाम आदित्यनाथ पड़ा.

आज परिणाम यह हुआ कि योगी आदित्यनाथ ने उत्तर प्रदेश का मुख्यमंत्री बन कर मुख्यमंत्री की रेस में लगे तमाम दिग्गजों को पछाड़ दिया. मुख्यमंत्री के रूप में योगी आदित्यनाथ ने फौरन ही अपने स्वर बदले. राज्यपाल राम नाईक द्वारा प्रदेश में सरकार गठन का आमंत्रण मिलते ही योगी आदित्यनाथ ने कहा कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के अभियान 'सबका साथ-सबका विकास' की भावना के साथ वे खड़े हैं और उत्तर प्रदेश में उसे शत प्रतिशत लागू कराने के लिए प्रतिबद्ध हैं. सही है कि योगी के सामने तमाम चुनौतियां खड़ी होंगी. योगी के रेस जीत लेने से कई सियासी अगरथत्तों को काफी परेशानी हो रही होगी. इसका मुकाबला करते हुए योगी को विकास के रास्ते पर चलना होगा. हाल ही में जनता की अपेक्षाओं को लेकर एक सर्वे हुआ जिसमें प्रदेश के करीब 25 हजार लोगों के विचार शामिल किए गए थे. अधिकांश लोगों ने बताया है कि उत्तर प्रदेश में कानून-व्यवस्था और स्वास्थ्य सेवा का ढांचा पूरी तरह टूट चुका है. प्रदेश की बदहाल कानून व्यवस्था और स्वास्थ्य सेवाओं पर योगी आदित्यनाथ लगातार सवाल उठाते रहे हैं. गोरखपुर और पूर्वांचल में अनजानी बीमारी (कथित तौर पर इंसेफलाइटिस) से लगातार हो रही बच्चों की मौत का मसला योगी के कारण ही राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय मसला बन सका. आखिरकार केंद्र सरकार ने गोरखपुर में एम्स बनाने की मंजूरी दी. सर्वे में 82 प्रतिशत लोगों ने सुरक्षा को लेकर गहरी चिंता जाहिर की है. उनका कहना है कि पुख्ता कानून व्यवस्था नई सरकार की पहली प्राथमिकता होनी चाहिए. भ्रष्टाचार को लेकर भी लोग काफी चिंतित हैं. लोगों का कहना है कि विधायी और नौकरशाही के गठजोड़ से फल-फूल रहा भ्रष्टाचार सारी बीमारियों की जड़ है, जिसे खत्म किया जाना चाहिए. लोगों ने राज्य में सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा के बुनियादी ढांचे में पूर्ण सुधार की जरूरत को रेखांकित किया है. 73 प्रतिशत से अधिक नागरिकों ने इच्छा जाहिर की है कि नई सरकार लालफीताशाही और भ्रष्टाचार को खत्म करे. योगी को इन चुनौतियों से दो-दो हाथ करना होगा.

(शेष पृष्ठ 3 पर)

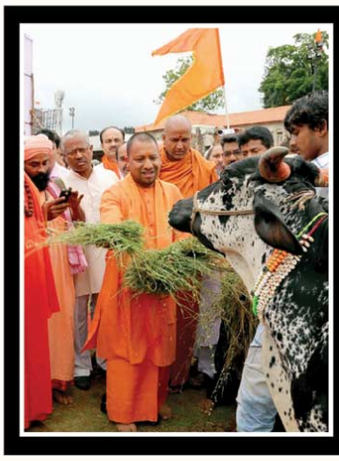
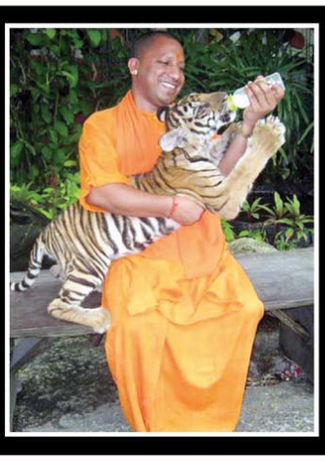
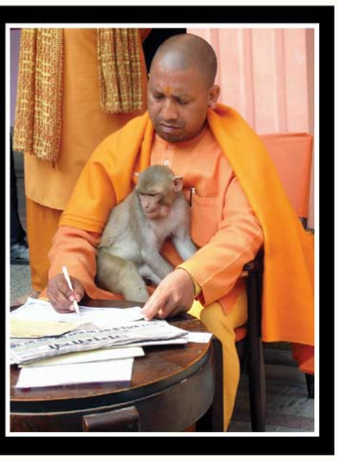

चौथी दुनिया
हिंदी का पहला साप्ताहिक अखबार

वर्ष 09 अंक 04
27 मार्च- 02 अप्रैल 2017

RNI-DELHIN/2009/30467

संपादक
संतोष भारतीय

संपादक समन्वय
डॉ. मनीष कुमार

एडिटर (इंवेस्टिगेशन)
प्रभात रंजन दीन

सहायक संपादक
सरोज कुमार सिंह (बिहार-झारखंड)
सरयू भवन, वेस्ट बोरिंग केनाल रोड,
हरीलाल स्वीट्स के निकट, पटना-800001
फोन: 0612 3211869, 09431421901

मैसर्स अंकुश पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड के लिए मुद्रक व प्रकाशक रामपाल सिंह भदौरिया द्वारा जागरण प्रकाशन लिमिटेड डी 210-211 सेक्टर 63 नोएडा उत्तर प्रदेश से मुद्रित एवं के- 2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001 से प्रकाशित

संपादकीय कार्यालय
के-2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001
कैंप कार्यालय एफ-2, सेक्टर -11, नोएडा, गौतमबुद्ध नगर उत्तर प्रदेश-201301

फोन न.
संपादकीय 0120-6451999
6450888
विज्ञापन व प्रसार 022-65500786
+91-8451050786
+91-9266627379
फैक्स न. 0120-2544378

पृष्ठ-16++ (बिहार-झारखंड, उत्तर प्रदेश-उत्तराखंड)

चौथी दुनिया में छपे सभी लेख अथवा सामग्री पर चौथी दुनिया का कॉपीराइट है. बिना अनुमति के किसी लेख अथवा सामग्री के पुन: प्रकाशन पर कानूनी कार्रवाई की जाएगी.

समस्त कानूनी विवादों का क्षेत्राधिकार दिल्ली न्यायालयों के अधीन होगा.

यूपी के पीठाधीश्वर

पृष्ठ 2 का शेष

सबसे तेज़ 'जनता-चैनल', 12 बजे ही योगी को बना दिया सीएम

उत्तर प्रदेश का मुख्यमंत्री कौन होगा इसे लेकर प्रदेशभर में चर्चा, शोरगुल और गुणाभाग चल रहा था. दिल्ली से लेकर राजधानी लखनऊ तक नेताओं की भागदौड़ लगी थी. आधिकारिक तौर पर 18 मार्च की शाम को योगी आदित्यनाथ के मुख्यमंत्री बनने की खबर बाहर निकली. लेकिन नेताओं से लेकर मीडिया प्रतिनिधियों तक को आश्चर्य तब हुआ, जब उन्होंने दोपहर के 12 बजे से ही सोशल मीडिया पर योगी आदित्यनाथ के मुख्यमंत्री होने की खबर चलती देखी. जो मीडिया प्रतिनिधि अब तक हुए यूपी के मुख्यमंत्रियों का क्रम खंगाल रहे थे, वे विकिपीडिया देख कर हैरत में थे कि वहां मुख्यमंत्री का नाम अखिलेश यादव से हट कर योगी आदित्यनाथ हो चुका है. हालांकि दोपहर में विकिपीडिया पर फोटो अखिलेश यादव की ही लगी हुई थी, लेकिन नाम योगी लगा था. शाम को अखिलेश की फोटो भी हट गई थी और वाकायदा योगी की फोटो वहां चस्पा थी.

सीएम के पहले ही कौन बनेगा मंत्री की चर्चा तेज थी

नूतन सचिवालय 'लोकभवन' में 18 मार्च की शाम को विधायक दल की बैठक होने वाली थी. नव निर्वाचित विधायक लोकभवन परिसर में दोपहर बाद से ही जुटने लगे थे. विधायकों के जमावड़े में यही चर्चा थी कि कौन-कौन बनेगा मंत्री. जबकि तब तक यह भी तय नहीं हुआ था कि मुख्यमंत्री कौन बनेगा. आइए इस चर्चा की पतंगबाजी का आप भी जायजा लीजिए.

मंत्री बनने के लिए भाजपा के सहयोगी दल के नव निर्वाचित विधायकों ने कुछ अधिक ही सपने संजो रखे हैं. भाजपा के पार्टी के नेताओं के साथ-साथ राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के पदाधिकारियों को भी साधने की जरूरत पर जोर दे रहे थे. जिन लोगों के मंत्री होने की संभावनाओं पर चर्चा हो रही थी, उनमें शाहजहांपुर के सुरेश खन्ना, बरेली के राजेश अग्रवाल, कानपुर के सतीश महाना, गोरखपुर के डॉ. राधामोहन दास अग्रवाल, आंवला से धर्मपाल सिंह, पूर्व एमएलसी स्वतंत्रदेव सिंह, एमएलसी महेंद्र सिंह और बसपा से भाजपा में आए स्वामी प्रसाद मौर्य के नाम तो शामिल थे ही, इनके अलावा भगवंतनगर सीट से जीते हृदय नारायण दीक्षित, मेरठ की सरधना से जीते संगीत सोम, मुजफ्फरनगर से जीते अवतार सिंह भड़ाना, मथुरा से जीते श्रीकांत शर्मा, बाराबंकी से जीते बैजनाथ रावत, प्रदेश महामंत्री विद्याशंकर सोनकर, नोएडा से विधायक चुने गए पंकज सिंह, लखनऊ से जीते आशुतोष टंडन, लखनऊ कैंट से जीतीं डॉ. रीता बहुगुणा जोशी, लखनऊ सदर से जीते बृजेश पाठक, औराई से जीते दीनानाथ भाष्कर, घोसी से जीते फागू चौहान, काशी से जीते रवींद्र जायसवाल, थाना भवन से जीते सुरेश राणा, पूर्व मंत्री वीरेंद्र सिंह सिरोही, एमएलसी भूपेंद्र सिंह, रालोद से आए ठाकुर दलवीर सिंह, अमेठी से जीतीं गरिमा सिंह और सरोजनी नगर से विधायक बनीं स्वाति सिंह के नाम पर भी खूब चर्चा थी. माफिया सरगना मुख्तार अंसारी के बड़े भाई सिगबतुल्ला अंसारी को हराकर जीतीं अलका राय (मुख्तार के हाथों मारे गए भाजपा नेता कृष्णानंद राय की पत्नी), इलाहाबाद से जीते सिद्धार्थनाथ सिंह के साथ-साथ भाजपा के सहयोगी दल भासपा के अध्यक्ष ओमप्रकाश राजभर व अपना दल के विधायक नीलरतन पटेल के भी मंत्री बनने की चर्चा थी.

फोटो : प्रभात पाण्डेय

शुरू हो गई भाजपाई दावों की परीक्षा

'उत्तर प्रदेश में भाजपा की सरकार बनते ही पहली कैबिनेट बैठक में प्रदेश के किसानों का कर्जा माफ करने का निर्णय लिया जाएगा', चुनावी रैली में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने जोर देकर यह बात कही थी. लोगों ने भी मोदी के इस वाक्यांश को खास तौर पर नोट कर लिया था. अब प्रधानमंत्री के उस वादे की परीक्षा होगी.

चुनाव प्रचार के दौरान और विभिन्न सभाओं में भी योगी आदित्यनाथ भी उत्तर प्रदेश के भ्रष्टाचार और गन्ना किसानों के हजारों करोड़ रुपये के बकाये के भुगतान पर जोर देते रहे हैं. योगी ने अभी हाल में कहा था कि यूपी में भाजपा की सरकार बनी तो 14 साल के भ्रष्टाचार की जांच की जाएगी और दोषियों को जेल भेजा जाएगा. योगी ने स्पष्ट रूप से सपा और बसपा के कार्यकाल में हुए भ्रष्टाचार का हवाला देते हुए यह बात कही थी. योगी ने यह भी कहा था कि स्कूलों, सड़कों और चिकित्सा के क्षेत्र में विकास के लिए केंद्र से भेजा गया धन मुस्लिम तुष्टीकरण के काम में लगा दिया गया. इसके खिलाफ भी भाजपा की सरकार सख्त कार्रवाई करेगी. शपथ ग्रहण के साथ ही मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ की परीक्षा शुरू हो गई है. ■

पीएम को गढ़वाली पसंद हैं

यूपी के मुख्यमंत्री के रूप में योगी आदित्यनाथ के चयन के बाद इस पर भी बात चली कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को उत्तराखंड और खास कर गढ़वाली पसंद हैं. उल्लेखनीय है कि देश के राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार अजित डोभाल के साथ-साथ देश के थलसेना अध्यक्ष जनरल विपिन सिंह रावत, रिसर्च एंड एनालिसिस विंग (रॉ) के प्रमुख अनिल धस्माना, उत्तराखंड के मुख्यमंत्री त्रिवेंद्र सिंह रावत और अब उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ भी मूल रूप से गढ़वाल के हैं. कांग्रेस से भाजपा में आए उत्तराखंड के पूर्व मुख्यमंत्री विजय बहुगुणा भी गढ़वाल के ही हैं.

दमदार है केशव मौर्य की राजनीतिक यात्रा

उत्तर प्रदेश भाजपा के अध्यक्ष केशव प्रसाद मौर्य के बारे में भले ही यह कहा जाता रहे कि मौर्य पिछड़ों और दलितों का चेहरा हैं, लेकिन यह जमीनी और सामाजिक यथार्थ नहीं है. उत्तर प्रदेश के उपमुख्यमंत्री बने केशव प्रसाद मौर्य की छवि जातिवादि से अलग प्रखर हिन्दूवादी के रूप में रही है. मौर्य का राजनीतिक जीवन 2012 में शुरू हुआ, जब वे सिराथू सीट से विधायक बने थे. इसके बाद वे आगे बढ़ते ही रहे. वर्ष 2014 में मौर्य इलाहाबाद की फूलपुर लोकसभा सीट से जीत कर सांसद बने और दो ही साल बाद वे पार्टी के प्रदेश अध्यक्ष बन गए. भाजपा के पहले मौर्य विश्व हिन्दू परिषद और बजरंग दल में सक्रिय कार्यकर्ता और प्रचारक के बतौर शरीक रहे हैं. मौर्य भी यह कहते हैं कि वे भी मोदी की तरह चाय बेचते थे. लेकिन उनका यह दावा यथार्थ कम नकल ज्यादा है. कौशांबी के सिराथू में किसान परिवार में पैदा हुए केशव प्रसाद मौर्य विहिप नेता अशोक सिंघल के काफी करीबी थे. मौर्य राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ से गहरे जुड़े थे और श्रीराम जन्म भूमि आंदोलन में जेल की सजा भी काट चुके हैं.

योगी को साधु के रूप में सम्मान प्राप्त है. उनके साथ जाति जोड़ना उचित नहीं है, क्योंकि संन्यासी होने के बाद किसी व्यक्ति की कोई जाति नहीं रह जाती. इसके बावजूद योगी के राजनीतिक विरोधी और मीडिया के लोग योगी को जाति के फ्रेम में कसने की कोशिश करते हैं. जबकि उनकी स्वीकार्यता न केवल हिन्दुओं बल्कि मुसलमानों और अन्य समुदायों में भी है. इसका उदाहरण देते हुए उन्होंने बताया कि भाजपा की ऐतिहासिक जीत पर पिछले दिनों जब गोरखपुर में योगी आदित्यनाथ की शोभा यात्रा निकली तो मुस्लिम समुदाय के लोगों द्वारा किए जाने वाले भव्य स्वागत के कारण रेती के पुल पर घंटों जाम लगा रहा.

2017 के विधानसभा चुनाव से पहले प्रदेश अध्यक्ष बनाए गए केशव प्रसाद मौर्य ने चुनाव प्रचार में जमकर हिस्सा लिया. मौर्य की छवि अच्छे नेता और वक्ता के रूप में है. इस चुनाव में ही उन्होंने 155 चुनावी सभाएं की. केशव प्रसाद पर कई आपराधिक मामले भी दर्ज हैं, जिन्हें वे राजनीतिक कुचक्र का नतीजा बताते हैं. 48 साल के केशव प्रसाद मौर्य ने भी 14 साल की उम्र में घर-बार छोड़ दिया था और विहिप नेता अशोक सिंघल के साथ जुड़ गए थे. सिंघल से नजदीकी के कारण ही मौर्य की संघ में अच्छी पकड़ बन गई.

मेयर से डिप्टी सीएम तक का सौम्य चेहरा

उत्तर प्रदेश के उपमुख्यमंत्री के रूप में चुना गया दूसरा चेहरा लखनऊ के मेयर डॉ. दिनेश शर्मा का है. दिनेश शर्मा सौम्य, ईमानदार और स्वच्छ छवि के व्यक्ति माने जाते हैं. दिनेश शर्मा भाजपा के राष्ट्रीय उपाध्यक्ष और गुजरात राज्य के प्रभारी भी रहे हैं. उच्च-शिक्षित डॉ. दिनेश शर्मा लखनऊ विश्वविद्यालय के प्रोफेसर भी रहे हैं. वे कॉमर्स संकाय में प्रोफेसर हैं. मृदुभाषी डॉ. दिनेश शर्मा प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी, राष्ट्रीय अध्यक्ष अमित शाह और संघ के प्रिय हैं. उत्तर प्रदेश में भाजपा को मजबूत करने में शर्मा की अहम भूमिका रही है. भाजपा आलाकमान ने पार्टी की सदस्यता बढ़ाने के महाभियान की कमान दिनेश शर्मा के हाथ में ही सौंपी थी. चुनाव के पहले भाजपा के सदस्यता अभियान की रिकॉर्ड सफलता का श्रेय डॉ. दिनेश शर्मा को मिला.

लव-जेहाद पर डॉ. दिनेश शर्मा का बयान भी काफी सुर्खियों में रहा था, लेकिन वह योगी की तरह विस्फोटक नहीं बना. डॉ. शर्मा ने कहा था कि लव-जेहाद घातक बम से भी अधिक घातक है. शर्मा ने कहा था कि प्रेम को एक धार्मिक औजार बना लिया जाए और एक वर्ग विशेष के खिलाफ इसे अभियान के तौर पर चलाया जाए, जोर ज़बरदस्ती की जाए तो यह जघन्य अपराध है. महिलाओं के साथ दुष्कर्म करने के बाद उसकी फिल्म बनाकर, प्रदर्शित करके, उसे ब्लैकमेल करके, उसके घर वालों को ब्लैकमेल करके, जबरन उनका धर्म परिवर्तन कराया जाए और उसको अपने साथ में रहने के लिए मजबूर किया जाए, तो इस घृणित रवैये और रास्ते का पुरजोर विरोध होना चाहिए. ऐसे किसी काम या जबरन धर्म परिवर्तन का न हिंदू धर्म समर्थन करता है और न ही इस्लाम करता है. ऐसी गतिविधियों का चलना न केवल खतरनाक है, बल्कि यह देश को तोड़ने की प्रक्रिया है. यह बम और एटम बम से ज्यादा खतरनाक है. ■

शाह का साथ और सिर पर संघ का हाथ

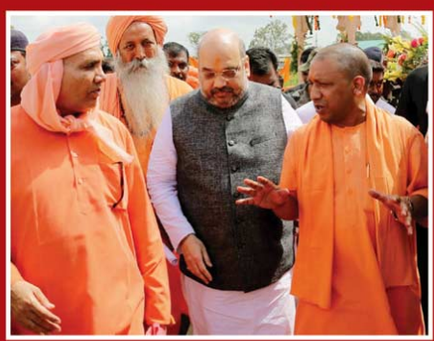

योगी आदित्यनाथ को भाजपा राष्ट्रीय अध्यक्ष अमित शाह का साथ मिला और राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ ने योगी के सिर पर हाथ रख दिया. फिर योगी का रथ फर्राटा भरता हुआ आगे निकल गया. संघ से जुड़े एक वरिष्ठ पदाधिकारी ने बस्ती की उस सभा की याद दिलाई जिसमें राष्ट्रीय अध्यक्ष अमित शाह मौजूद थे और उनकी मौजूदगी में यूपी का सीएम कैसा हो, योगी आदित्यनाथ जैसा हो के नारे लग रहे थे. इन नारों से शाह के भाषण में व्यवधान हो रहा था. भाषण बीच में ही रोक कर अमित शाह ने लोगों से नारेबाजी रोकने के लिए कहा, फिर अपना भाषण शुरू किया. उस सभा के बाद अमित शाह ने कई सभाओं में यह बात कही कि योगी आदित्यनाथ का नाम आते ही लोगों में जोश भर जाता है. ऐसा बोल कर अमित शाह ने योगी का प्रभाव भी आंका. अमित शाह ने योगी को मुख्यमंत्री के प्रबल दावेदार के रूप में स्वीकार कर लिया था और उन्होंने योगी को संकेत भी दे दिए थे. मुख्यमंत्री के चयन में संघ का सबसे अधिक नम्बर योगी को ही प्राप्त हुआ. संघ के उक्त पदाधिकारी का कहना है कि योगी को साधु के रूप में सम्मान प्राप्त है. उनके साथ जाति जोड़ना उचित नहीं है, क्योंकि संन्यासी होने के बाद किसी व्यक्ति की कोई जाति नहीं रह जाती. इसके बावजूद योगी के राजनीतिक विरोधी और मीडिया के लोग योगी को जाति के फ्रेम में कसने की कोशिश करते हैं. जबकि उनकी स्वीकार्यता न केवल हिन्दुओं बल्कि मुसलमानों और अन्य समुदायों में भी है. इसका उदाहरण देते हुए उन्होंने बताया कि भाजपा की ऐतिहासिक जीत पर पिछले दिनों जब गोरखपुर में योगी आदित्यनाथ की शोभा यात्रा निकली तो मुस्लिम समुदाय के लोगों द्वारा किए जाने वाले भव्य स्वागत के कारण रेती के पुल पर घंटों जाम लगा रहा. यहां तक कि योगी को प्रदेश का मुख्यमंत्री बनने के लिए 18 मार्च को लोग तोता-मैना शाह की मजार पर चादर चढ़ा रहे थे. संघ के उक्त पदाधिकारी का दावा है कि योगी कानून व्यवस्था, स्वास्थ्य सेवा, किसानों की समस्या के साथ-साथ बिजली-पानी जैसी मूलभूत समस्याओं के निवारण पर ध्यान देंगे. 2019 का लोकसभा चुनाव सामने है और वर्ष 2018 में मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ और राजस्थान जैसे राज्यों में भी विधानसभा चुनाव होने हैं. लिहाजा योगी और मोदी दोनों ही बेहतर माहौल बनाना चाहेंगे. तलाक के मसले पर वैसे ही मुस्लिम महिलाओं का भाजपा को समर्थन मिला है और शिया समुदाय ने भी भाजपा के पक्ष में कई स्थानों पर वोट डाले हैं. ■

feedback@chauthiduniya.com

वन अधिकार क़ानून

खाता ना बही, जो सरकार कहे वही सही

शफीक आलम

महाराष्ट्र के पालघर जिला के कलेक्टर के दफ्तर के सामने 1,500 अनुसूचित जनजाति के किसानों ने वन अधिकार कानून के तहत ज़मीन पर अपना अधिकार हासिल करने के लिए विरोध का एक अनोखा तरीका अपनाया. इन किसानों ने कलेक्टर के दफ्तर के सामने लंबी लाइन बना कर सत्याग्रह की शुरुआत की. इन किसानों ने वर्ष 2013 में आरटीआई (सत्याग्रह) का इस्तेमाल कर वन अधिकार अधिनयम (एफआरए) 2006 के तहत मिलने वाले अपने अधिकारों की जानकारी हासिल की थी. उन आरटीआई के जरिए इन्हें पता चला था कि एफआरए के तहत जो ज़मीन इन्हें मिली है, वो इनकी जोत की ज़मीन से बहुत कम है. शिकायत के बाद 60 दिन के भीतर आवंटित ज़मीन की दुबारा माप करनी थी. लेकिन किसानों का कहना है कि तीन साल तक इंतज़ार करने के बाद भी अब तक जमीन की माप नहीं हुई. इन किसानों का यह भी कहना है कि बार-बार याद दिलाने के बावजूद सरकार इस दिशा में कोई कदम नहीं उठा रही है, तो अब लाइन में खड़े हो कर हमने सत्याग्रह शुरू किया है.

इस सत्याग्रह में शामिल होने वाले किसानों में से ज्यादातर किसान 2013 में आयोजित आरटीआई सत्याग्रह में भी शामिल थे. आरटीआई द्वारा हासिल जानकारियों से यह पता चलता है कि सरकारी तंत्र आरटीआई के प्रावधानों की कैसे धज्जियां उड़ाता है. दरअसल, वन विभाग ने बिना सत्यापन के कम ज़मीन देने की अनुशंसा कर दी थी, जिसे डिस्ट्रिक्ट लेवल समिति और सब डिवीज़न लेवल समितियों ने आवेदक को सूचित किए बिना ही स्वीकार कर लिया था. जबकि नियमानुसार ग्राम सभा की सहमती के बिना किसी को ज़मीन आवंटित नहीं किया जा सकता था. आरटीआई सत्याग्रह के बाद राज्य सीआईसी ने यह आदेश दिया था कि एफआरए के तहत आवंटित ज़मीन की सभी जानकारियां जिला अधिकारी की वेबसाइट पर प्रकाशित की जाएं. बहरहाल, 2013 में दाखिल अपील के बाद भी अब तक इस मामले में कोई सुनवाई नहीं हुई है. जनजातियों को अपने उन अधिकारों के लिए संघर्ष करना पड़ रहा है, जो उन्हें बिना किसी लाग लपेट के मिल जाना चाहिए था.

दरअसल, यह स्थिति केवल महाराष्ट्र के पालघर जिले की ही नहीं है, एफआरए के कार्यान्वयन के मामले में देश के दूसरे हिस्सों का भी यही हाल है. कई जगह तो स्थिति और भी ख़राब है. एफआरए को पारित हुए दस साल बीत चुके हैं. किसी योजना के कार्यान्वयन के लिए दस साल का समय बहुत होता है. यहां तो मामला संवैधानिक है, लेकिन इसके बावजूद समाज के सर्वाधिक वंचित समूहों के प्रति सरकारों का रवैया न केवल बहुत ही लचर, टाल-मटोल करने वाला या सिरे से नज़रंदाज़ करने वाला है, बल्कि द्वेषपूर्ण भी है. सरकारों ने एफआरए को कमज़ोर करने का कोई भी मौक़ा हाथ से जाने नहीं दिया है (देखें बॉक्स). एफआरए के पारित होने के दस साल बाद वन क्षेत्र में रहने वाले जनजातियों के कल्याण के लिए काम करने वाली गैर-सरकारी संस्थाओं के एक समूह (सीएफआर-एलए) ने एक रिपोर्ट जारी की है. इस रिपोर्ट में जो नतीजे ज़ाहिर किए गए हैं, उनसे यह साबित होता है कि सरकारें समाज के सबसे वंचित तबकों के लिए बड़े-बड़े वादे करती हैं, कानून भी पारित कर देती हैं, लेकिन खुद ही उन कानूनों की धज्जियां भी उड़ा देती हैं. अनुसूचित जनजाति और अन्य परम्परागत वनवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम- 2006 या वन अधिकार अधिनियम (एफआरए) के साथ भी कुछ ऐसा ही हुआ है. वरना क्या वजह है कि जिस कानून को पारित हुए दस साल बीत चुके हैं, उसका केवल तीन प्रतिशत ही अब तक कार्यान्वित किया जा सका है. हालांकि बीच-बीच में सरकारें इसके कार्यान्वयन पर अपनी पीठ थपथपा लेती हैं.

बहरहाल, एफआरए के तहत न्यूनतम अनुमानित वन क्षेत्र (पांच उत्तर-पूर्वी राज्यों और जम्मू और कश्मीर को छोड़कर) लगभग 85.6 मिलियन एकड़ (34.6 मिलियन हेक्टेयर) है, जिसपर सामुदायिक वन संसाधन (सीएफआर) का अधिकार मिल सकता है. इन वन क्षेत्रों के 1.70 लाख गांव में रहने वाले लगभग 20 करोड़ अनुसूचित जनजातियों और अन्य पारंपरिक वन निवासियों (ओटीएफडी) के अधिकारों को मान्यता देने का अनुमान है. लेकिन सीएफआर-एलए की रिपोर्ट के मुताबिक एफआरए के पारित होने के दस साल बाद भी वन क्षेत्र में रहने वाले लोगों के अधिकार नहीं दिए गए हैं. इस रिपोर्ट में कहा गया है कि 20 करोड़ अनुसूचित जनजाति के लोगों में से लगभग 19 करोड़ लोगों के अधिकारों का सम्मान अभी नहीं किया गया है. ज़ाहिर सी बात है, इस स्थिति के लिए एक तरफ जहां केंद्र सरकार और इस अधिनियम के कार्यान्वयन के लिए ज़िम्मेदार मंत्रालय ज़िम्मेदार हैं, वहीं राज्य सरकारें भी इसके लिए कम ज़िम्मेदार नहीं हैं. एक तरफ जहां ओडिशा, गुजरात, महाराष्ट्र और केरल जैसे राज्य इस अधिनियम के क्रियान्वयन में आगे रहे हैं, वहीं असम, बिहार, गोवा, हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड सबसे पीछे हैं.

एफआरए के क्रियान्वयन में आगे रहने वाले राज्यों की स्थिति भी कम दयनीय नहीं है. इसका अंदाज़ा महाराष्ट्र के पालघर जिले में चल रहे आंदोलन से लगाया जा सकता है. यहां आंदोलनरत अनुसूचित जनजाति के किसानों का आरोप है कि वन अधिकारियों ने मनमाने ढंग से और ग्राम सभा के सत्यापन के बिना ही जनजातीय किसानों को कम ज़मीन देने की अनुशंसा कर दी थी. जबकि एफआरए के तहत इस मामले में ग्राम सभा की सहमती आवश्यक है. जब महाराष्ट्र का ये हाल है, तो जिन राज्यों में इस मामले में कोई काम नहीं हुआ, वहां के वनक्षेत्र में रहने वाले जनजातियों की स्थिति का अंदाजा लगाया जा सकता है.

इस लचर सरकारी रवैये को देखते हुए प्रधानमंत्री कार्यालय को भी हस्तक्षेप करना पड़ा. नवंबर 2016 में पीएमओ की तरफ से सात राज्यों को यह आदेश दिया गया कि सदियों से वनों में रहने वाले अनुसूचित जनजातियों के अधिकार उन्हें वापस दिलाने में शीघ्रता बरतें. ये सात राज्य हैं- असम, बिहार, हिमाचल प्रदेश, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड, और झारखण्ड.

एक लम्बी लड़ाई के बाद सदियों से उपेक्षा के शिकार और अपने अधिकारों से वंचित, वन क्षेत्र में रहने वाले लोगों के अधिकारों को बहाल करने के लिए और इन क्षेत्रों में नक्सलवाद के असर को कम करने और वन संरक्षण को ध्यान में रखते हुए तत्कालीन योजना आयोग की अनुशंसा पर वन अधिकार अधिनियम पारित किया गया था. लेकिन इसके क्रियान्वयन पर जिस रफ्तार से काम हो रहा है, उसे देखते हुए यह कहा जा सकता है कि अनुसूचित जनजातियों और वन क्षेत्र में रहने वाले लोगों को अपने अधिकार हासिल करने के लिए अभी और संघर्ष करना पड़ेगा. शायद सरकार के पास उनकी सुध लेने का समय नहीं है. हालांकि केंद्र सरकार ने इस क्षेत्र के लिए एक अलग मंत्रालय स्थापित कर रखा है, लेकिन वो अब तक फिसड्डी साबित हुआ है. सरकारों ने न केवल एफआरए को लागू करने में विलम्ब से काम लिया है, बल्कि इसे कमज़ोर करने की कोशिश भी की है. ■

feedback@chauthiduniya.com

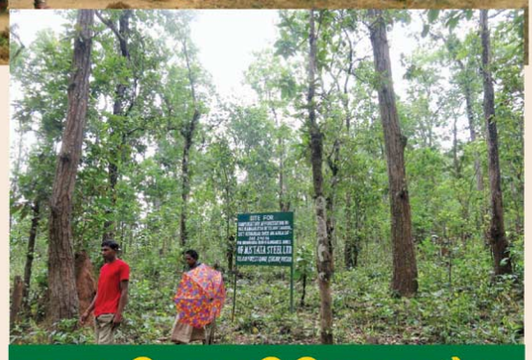

> एक लम्बी लड़ाई के बाद सदियों से उपेक्षा के शिकार और अपने अधिकारों से वंचित, वन क्षेत्र में रहने वाले लोगों के अधिकारों को बहाल करने के लिए और इन क्षेत्रों में नक्सलवाद के असर को कम करने और वन संरक्षण को ध्यान में रखते हुए तत्कालीन योजना आयोग की अनुशंसा पर वन अधिकार अधिनियम पारित किया गया था. लेकिन इसके क्रियान्वयन पर जिस रफ्तार से काम हो रहा है, उसे देखते हुए यह कहा जा सकता है कि अनुसूचित जनजातियों और वन क्षेत्र में रहने वाले लोगों को अपने अधिकार हासिल करने के लिए अभी और संघर्ष करना पड़ेगा.

दो मंत्रालयों के बीच पत्राचार

चौथी दुनिया ने अपने 20 जून 2016 के अंक में एक विस्तृत रिपोर्ट प्रकाशित की थी, जिसमें एनडीए सरकार के दो मंत्रालयों के बीच हुए पत्राचार के हवाले से बताया गया था कि सरकार कैसे एफआरए के अंतर्गत आदिवासियों और वन में निवास करने वाले लोगों के अधिकार को छिनना चाहती है. यह पत्राचार जून 2015 और दिसंबर 2015 के दरम्यान जनजातीय मामलों के मंत्रालय और पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय के अधिकारियों के बीच हुआ था. इन पत्रों में जनजातीय मामलों के मंत्रालय ने अपना रुख स्पष्ट करते हुए कहा था कि वन भूमि को किसी परियोजना के लिए आवंटित करने से पहले एफआरए के तहत उस क्षेत्र के ग्राम सभा की सहमति अनिवार्य है. जबकि पर्यावण मंत्रालय इस ग्राम सभा की सहमति के क्लॉज़ हटाने की बात कर रहा था. एफआरए की सहमति वाले क्लॉज़ को लेकर इन दो मंत्रालयों के बीच की रस्साकशी के दौरान केंद्र सरकार ने कैम्पा बिल पेश किया था, उस बिल में ग्राम सभा की सहमती का क्लॉज़ शामिल नहीं था. ■

वन अधिकार अधिनियम क्या है?

अनुसूचित जनजाति और अन्य पारंपरिक वनवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम- 2006 या वन अधिकार अधिनियम- 2006, वन क्षेत्र में रहने वाले लोगों की एक लंबी लड़ाई के बाद दिसंबर 2006 में पारित किया गया. यह कानून वन संसाधनों और वन क्षेत्र पर उन लाखों लोगों के अधिकारों को सुनिश्चित करता है, जिन अधिकारों से यहां बसने वाले लोगों को सैकड़ों सालों से वंचित कर रखा गया. यह कानून पूरे भारत में वन भूमि और वन संसाधनों पर व्यक्तिगत और सामूहिक अधिकार देता है. यह कानून 1 जनवरी 2008 को लागू हुआ था. इस कानून को, वन क्षेत्र में रहने वाले लोगों पर हो रहे ऐतिहासिक अन्याय को समाप्त करने का एक बड़ा हथियार माना गया. वन अधिकार अधिनियम के पारित होने के बाद यह आशा की जा रही थी कि इससे लोकल सेल्फ गवर्नेंस को भी मजबूती मिलेगी और लोगों के जीविका का मसला बहुत हद तक हल होगा, जिसे गरीबी उन्मूलन में मदद मिलेगी. साथ ही प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण में भी मदद मिलेगी और जो वन क्षेत्र हिंसा ग्रस्त हैं, वहां हिंसा में कमी आएगी. इस अधिनियम के दूसरे महत्वपूर्ण पक्ष ये हैं कि यह व्यक्तिगत संपत्ति के साथ-साथ सामूहिक संपत्ति का प्रावधान भी करता है. यह कानून सामुदायिक वन लगाने, उनकी रक्षा करने और उनके संरक्षण का अधिकार देता है. इसमें विस्थापित लोगों के अधिकार और वन क्षेत्र में विकास के कार्यों से संबंधित अधिकारों का भी प्रावधान है, जिसमें ग्राम सभा की महत्वपूर्ण भूमिका होती है. लेकिन पिछले दस वर्षों में इस अधिनियम को कमज़ोर करने की हर मुमकिन कोशिश की गई है. इन कोशिशों में वर्ष 2016 में ग्राम सभा के क्लॉज़ के बिना कैम्प बिल का पारित होना और ग्राम सभा के अधिकार को लेकर केंद्र सरकार के दो मंत्रालयों के पत्राचार का लीक होना महत्वपूर्ण हैं. ■

वन अधिकार अधिनियम को कमज़ोर करने की साज़िश

वन (संरक्षण) अधिनियम 1980 के एक क़ानून के मुताबिक उद्योग, कारखानों और दूसरे गैर-वन उपयोग के लिए काटे गए जंगलों के बदले नए पेड़ लगाने और कमज़ोर या क्षीण हो रहे जंगल को घना बनाने के लिए वन भूमि का उपयोग करने वाली कंपनियां और संस्थाओं को मुआवजे देना पड़ता है. वर्ष 2002 में वन (संरक्षण) अधिनियम 1980 को लागू करने के संबंध में एक याचिका पर सुनवाई करते हुए सुप्रीम कोर्ट ने यह टिपण्णी की थी कि इस मद में जमा फण्ड या तो खर्च नहीं हो रहा है या फिर बहुत कम खर्च हो रहा है. इसी टिपण्णी के मद्देनज़र तत्कालीन यूपीए सरकार ने वर्ष 2008 में कैम्पा बिल पेश करने की कोशिश की थी, जिसे संसद की स्थाई समीति ने एफआरए के तहत ग्राम सभा को दिए गए अधिकारों का हवाला देते हुए नामंज़ूर कर दिया था. बहरहाल, मौजूदा केंद्र सरकार ने कैम्पा बिल 2015 में पेश किया था, जिसे लोकसभा ने पहले ही पारित कर दिया था. लेकिन चूंकि राज्यसभा में एनडीए सरकार के पास बहुमत नहीं है और कांग्रेस समेत सभी विपक्षी पार्टियां चाहती हैं कि इस बिल में एफआरए के तहत ग्राम सभा को दिए गए अधिकारों के अनुरूप ग्राम सभा की सहमती के क्लॉज़ को शामिल किया जाय. इस संबंध में कांग्रेस सांसद जयराम रमेश ने संसोधन प्रस्ताव पेश किया था. इसके बाद पर्यावरण मंत्री अनिल माधव दवे ने आश्वासन भी दिया कि विपक्ष द्वारा उठाई गई अपत्तियों को इस अधिनियम के तहत बनने वाले कानून में शामिल कर लिया जाएगा. इस बिल में ग्राम सभा के क्लॉज़ को शामिल करने के लिए वन अधिकार क्षेत्र में काम करने वाली देश भर की 45 सिविल सोसाइटी की संस्थाओं ने राज्यसभा को एक ज्ञापन भी दिया था. उनका कहना था कि इसमें वन अधिकार अधिनियम 2006 के उस प्रावधान को बेअसर करने का प्रयास किया गया है, जिसमें अनुसूचित जनजातियों एवं पारंपरिक रूप से वन में निवास करने वाले लोगों का वन के ऊपर अधिकार सुनिश्चित किया गया है. ■

विधानसभा चुनाव परिणाम के बाद

भाजपा बलपूर्वक कश्मीरियों के आंदोलन को कुचल पाएगी!

यूपी चुनावों में भारी बहुमत से जीत के कारण भाजपा सरकार की नीतियां न केवल कश्मीर बल्कि पाकिस्तान के प्रति भी और कड़ी हो सकती हैं. पत्रकार माजिद जहांगीर का कहना है कि यह बात समझने की आवश्यकता है कि यूपी चुनावों में भाजपा ने एक बार फिर मुसलमानों का यह भ्रम तोड़ दिया है कि उनके वोट बैंक का कोई महत्व है. दो क़दम आगे बढ़कर भाजपा ने यह भी साबित किया कि उसे मुस्लिम उम्मीदवारों की भी कोई आवश्यकता नहीं है. भाजपा साबित कर चुकी है कि इस देश में हिन्दुत्ववाद के नाम पर एक मज़बूत सरकार क़ायम की जा सकती है. मोदी सरकार ने बीते दो वर्षों के दौरान पाकिस्तान और कश्मीर के प्रति जो कड़ा रवैया अख्तियार किया हुआ है, उसके कारण देश की बड़ी हिन्दु आबादी के बीच भाजपा की लोकप्रियता बढ़ी है. उसे और क्या चाहिए.

हारून रेशी

घाटी में इन दिनों एक आम धारणा है कि यूपी और उत्तराखंड के चुनावों में भाजपा की असाधारण जीत के बाद कश्मीर के प्रति मोदी सरकार का रवैया और ज्यादा सख्त होगा. चुनाव परिणाम आने से कई सप्ताह पहले ही केन्द्रीय गृह मंत्रालय ने घाटी में पैलेट गनों की भारी सप्लाई को मंजूरी दे दी. इस समय सीआरपीएफ के पास 640 पैलेट गन मौजूद हैं, जिन्हें वो पिछले 9 महीने से घाटी में प्रदर्शनकारियों के खिलाफ इस्तेमाल कर रही है, लेकिन अब आने वाले दिनों में सीआरपीएफ के पास 4,949 पैलेट गन होंगी. ज़ाहिर है कि उन घातक हथियारों की संख्या बढ़ने से हिंसा की संभावना दिखने लगी है, जिनकी वजह से जुलाई 2016 से अब तक सैंकड़ों लोग घायल और दर्जनों दृष्टिहीन हो चुके हैं. सेना प्रमुख बिपिन रावत पहले ही यह वार्निंग दे चुके हैं कि सेना उग्रवादियों के समर्थन में प्रदर्शन करने वालों को भी उग्रवादी मानेगी और उनके खिलाफ कार्रवाई की जाएगी. रक्षा मंत्री रहते हुए मनोहर पार्रिकर सेना प्रमुख के इस बयान का समर्थन भी कर चुके हैं. जिसका साफ़ मतलब है कि कश्मीर में सेना की संभावित कार्रवाई को भाजपा सरकार का पूरा समर्थन प्राप्त होगा.

घाटी की दो संसदीय सीटों श्रीनगर (मध्य कश्मीर) और अनंतनाग (दक्षिणी कश्मीर) के उपचुनाव क्रमानुसार 9 और 12 अप्रैल को हो रहे हैं, यहां हालात ख़राब हो जाने की प्रबल संभावना है. पुलिस प्रमुख के अनुसार संभावित हालात से निबटने के लिए फोर्सेज की 54 और कंपनियां मंगवाई गई हैं. जहां तक दक्षिणी कश्मीर का संबंध है, यहां 8 जुलाई को बुरहान वानी की मौत के बाद पैदा हुए हिंसक हालात के प्रभाव आज भी साफ़ दिखाई दे रहे हैं. सच्चाई यह है कि पिछले 9 महीने के दौरान ज्यादातर दिन दक्षिणी कश्मीर हिंसक हालात का ही शिकार रहा है. आज भी इस क्षेत्र में समय-समय पर हालात ख़राब हो रहे हैं. सुरक्षा एजेंसियां श्रीनगर संसदीय क्षेत्र के 1559 मतदान केन्द्रों को सुरक्षा की दृष्टि से संवेदनशील या अति संवेदनशील घोषित कर चुकी हैं. इन सभी परिस्थितियों को देखते हुए अधिकतर लोग यह आशंका जता रहे हैं कि चुनावी गतिविधियां शुरू होने के साथ ही दक्षिण कश्मीर और श्रीनगर में हिंसक हालात पैदा हो सकते हैं. विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि सेना और अन्य सुरक्षा एजेंसियों की ओर से भी और कड़ा रुख़ देखने को मिल सकता है. वरिष्ठ पत्रकार और दैनिक चट्टान के संपादक ताहिर मुहीउद्दीन ने इस सिलसिले में बात करते हुए कहा, मुझे लगता है कि चुनाव प्रक्रिया शुरू हो जाने के साथ ही घाटी में विशेष रूप से दक्षिणी कश्मीर में हिंसक हालात पैदा होंगे. कश्मीर के प्रति मोदी सरकार का रवैया पहले तो कड़ा था ही, लेकिन पांच राज्यों के चुनावों में ज़बरदस्त जीत से संभव है कि यह रवैया और कड़ा होगा और इसका असर सुरक्षा एजेंसियों की कार्यशैली में भी देखने को मिल सकता है. क्योंकि सेना और अन्य सुरक्षा एजेंसियों की कार्यशैली पर हमेशा ही सरकार की नीतियों का असर रहता है.

विश्लेषकों का यह भी मानना है कि यूपी चुनावों में भारी बहुमत से जीत के कारण भाजपा सरकार की नीतियां न केवल कश्मीर बल्कि पाकिस्तान के प्रति भी और कड़ी हो सकती हैं. पत्रकार माजिद जहांगीर का कहना है कि यह बात समझने की आवश्यकता है कि यूपी चुनावों में भाजपा ने एक बार फिर मुसलमानों का यह भ्रम तोड़ दिया है कि उनके वोट बैंक का कोई महत्व है. दो क़दम आगे बढ़कर भाजपा ने यह भी साबित किया कि उसे मुस्लिम उम्मीदवारों की भी कोई आवश्यकता नहीं है. भाजपा साबित कर चुकी है कि इस देश में हिन्दुत्ववाद के नाम पर एक मज़बूत सरकार क़ायम की जा सकती है. मोदी सरकार ने बीते दो वर्षों के दौरान पाकिस्तान और कश्मीर के प्रति जो कड़ा रवैया अख्तियार किया हुआ है, उसके कारण देश की बड़ी हिन्दु आबादी के बीच भाजपा की लोकप्रियता बढ़ी है. उसे और क्या चाहिए. मेरा मानना है कि अगले लोकसभा चुनावों में ज़बरदस्त जीत हासिल करने के लिए भाजपा मुस्लिम विरोधी, कश्मीर विरोधी और पाकिस्तान विरोधी भावनाएं उछालकर वोटरों को लुभाने का नुस्खा इस्तेमाल करेगी. क्योंकि यह सच है कि अब तक भाजपा के लिए यह नुस्खा कामयाब साबित हुआ है. देश की बहुल हिन्दु आबादी भाजपा को इसलिए पसंद करती है, क्योंकि वो पाकिस्तान के साथ बातचीत करने के बजाय सर्जिकल स्ट्राइक करने में विश्वास रखती है. ये लोग कश्मीर में अलगाववादियों के साथ कोई संबंध रखने के बजाय प्रदर्शनकारियों के खिलाफ़ बल प्रयोग करने को सही समझते हैं. आपको भाजपा का रवैया कितना ही बुरा क्यों न लगे, लेकिन सच तो यह है कि इस पार्टी की कामयाबी का राज इसी प्रकार की नीतियों में है.

पत्रकार माजिद का मानना है कि भाजपा का निशाना संसद पर इस हद तक नियंत्रण प्राप्त करना है, ताकि किसी भी कानून में संशोधन करने के लिए उसे विपक्ष के समर्थन की आवश्यकता ही न हो. उन्होंने बताया कि भाजपा उस मुक़ाम तक पहुंचना चाहती है, जहां वो कश्मीर को विशेष हैसियत देने वाली भारतीय संविधान की धारा 370 को एक ही झटके में ख़त्म कर सके या एक हफ्ते में अयोध्या में राम मन्दिर का निर्माण करा सके. यह ताक़त मिलने के लिए ज़रूरी है कि भाजपा देश के हिन्दुओं को धर्म के नाम पर एक करे और उनका समर्थन प्राप्त करे. साथ ही उनमें दुश्मनी और पाकिस्तान के प्रति नफरत की भावना को उभारे. भाजपा यही सब कर रही है.

ऐसे हालात में यह अपेक्षा करना कि कश्मीर के प्रति मोदी सरकार का रुख़ किसी भी लिहाज़ से नरम होगा या निकट भविष्य में ये पाकिस्तान के साथ किसी प्रकार की दोस्ती या वार्ता करेंगे, ये सोचना मूर्खता है. अगर यह बात सही मानी जाय कि भाजपा की लोकप्रियता का ग्राफ इन कट्टर नीतियों के कारण बढ़ रहा है, तो विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि आने वाले दिनों में कश्मीरी जनता को इंडियन स्टेट का और कड़ा रुख़ देखना पड़ेगा. हालांकि जुलाई 2016 के बाद, यानि पिछले 9 महीने के दौरान अधिकतर दिनों में घाटी में हिंसा की लहर छाई रही. जनविरोध की सैकड़ों घटनाएं हुईं और उनसे निबटने के नाम पर सुरक्षा बलों ने ताक़त का बेतहाशा प्रयोग किया. इस अवधि में 100 से अधिक लोग मारे गए. दस हज़ार से अधिक लोग पैलेट लगने से घायल हुए. सैंकड़ों नौजवानों की आंखें पैलेट गन के प्रयोग की वजह से प्रभावित हुईं. 60 से अधिक युवा लड़के और लड़कियां जीवन भर के लिए अपनी दृष्टि खो बैठे. पुलिस और सुरक्षा बलों की ओर से हर मौके पर बल प्रयोग करना एक रूटीन बन चुका है. इस स्थिति के कारण में घाटी में सुरक्षा एजेंसियों के खिलाफ़ आक्रोश की एक लहर देखने को मिल रही है. इस बीच यहां मिलिटेंसी की घटनाओं में असाधारण इज़ाफ़ा देखने को मिल रहा है. न केवल घाटी में विदेशी लड़ाकों की मौजूदगी देखने को मिल रही है, बल्कि स्थानीय युवाओं में भी मिलिटेंसी के प्रति रूझान देखने को मिल रहा है. पुलिस अधिकारी इस बात को स्वीकार करते हैं कि बुरहान वानी की मौत के बाद घाटी में, विशेष रूप से दक्षिणी कश्मीर में, कई युवा मिलिटेंटों के समूह में शामिल हो चुके हैं. जम्मू-कश्मीर पुलिस के चीफ़ एसपी वेद का कहना है कि फिलहाल घाटी में 80 विदेशी मिलिटेंटों समेत 214 मिलिटेंट सक्रिय हैं, जिनमें से अधिकतर का संबंध हिज्बुल मुजाहिद्दीन के साथ है. अधिकारियों के अनुसार अधिकतर विदेशी लड़ाके उत्तरी कश्मीर में मौजूद हैं. हालांकि गैर सरकारी सूत्रों का कहना है कि घाटी में सक्रिय लड़ाकों की संख्या इससे कहीं अधिक है.

दो हफ्ते पूर्व दस लड़ाकों वाला एक समूह दक्षिण कश्मीर के शोपियां क्षेत्र में एक पुलिस अधिकारी के घर में घुस गया और वहां तोड़फोड़ मचाने के बाद घर वालों को धमकी दी कि वे उस पुलिस अधिकारी को तत्काल रूप से नौकरी छोड़ने के लिए कहें. इस घटना ने पुलिस विभाग को हिलाकर रख दिया. पुलिस विभाग ने इस पर तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए संकेत दिया कि अगर मिलिटेंटों ने पुलिस अधिकारियों के घरवालों को कोई नुक़सान पहुंचाने का सिलसिला शुरू किया, तो जवाबी कार्रवाई में मिलिटेंटों के परिवार वालों को निशाना बनाया जाएगा. इस संदर्भ में पुलिस चीफ एसपी वेद ने ट्वीटर पर लिखा कि हमने हमेशा मिलिटेंटों के परिवारजनों के साथ अच्छा व्यवहार किया है. हमने हमेशा उन्हें कहा कि वे अपने बच्चों का आत्मसमर्पण कराएं और उनका पुनर्वास कराएं. लेकिन उन्होंने (मिलिटेंटों ने) हमारे परिवारजनों पर हमले किए. उन्हें (मिलिटेंटों को) यह समझना चाहिए कि उनके परिवार भी कश्मीर में ही रह रहे हैं.

पिछले दिनों हिज्बुल मुजाहिद्दीन के कमांडर ज़ाकिर मूसा, जो इस संगठन में बुरहान वानी का उत्तराधिकारी भी है, उसका एक वीडियो संदेश सोशल मीडिया पर फैल गया. इस वीडियो में उसने पथराव करने वाले युवाओं की तारीफ करते हुए उन्हें नसीहत दी कि वे कौम के लिए नहीं, बल्कि इस्लाम के लिए पथराव करें. 12 मिनट के इस वीडियो संदेश में मिलिटेंट कमांडर ने घाटी में जारी आंदोलन को इस्लामी संघर्ष बताया. उसने मिलिटेंटों को अल्लाह का सिपाही बताया. उसने दावा किया कि कश्मीर में जारी संघर्ष मूल रूप से इस्लाम की खातिर संघर्ष है. हिज्बुल मुजाहिद्दीन के कमांडर के इस बयान पर घाटी में कुछ विश्लेषकों का कहना है कि हिज्ब में धार्मिक कट्टरता की यह सोच पहली बार देखने को मिल रही है. अतीत में हिज्ब का रुख यह था कि वे कश्मीर समस्या के हल के लिए सशस्त्र संघर्ष कर रहे हैं. हिज्बो ने अतीत में कई बार युद्धविराम की घोषणा भी की है, जो बात इस का सबूत था कि यह संगठन किसी अंतर्राष्ट्रीय एजेंडे पर काम नहीं कर रहा है. लेकिन नए कमांडरों की नई सोच ने विभिन्न प्रकार के संशय पैदा किए हैं. दूसरी ओर आम युवाओं में भी कट्टर सोच की कई मिसालें देखने को मिल रही हैं. घाटी में पिछले कुछ महीनों से सेना और लड़ाकों के बीच मुठभेड़ों के दौरान आम युवाओं की ओर से सेना पर पथराव की घटनाएं बढ़ रही हैं. झड़पों के दौरान सेना का ध्यान भटकाने और लड़ाकों को भागने का मौका देने के लिए आम कश्मीरी युवा पथराव कर रहे हैं. सेना प्रमुख बिपिन रावत ने इसी सिलसिले में धमकी दी है कि अगर एनकाउंटर साइट्स पर सेना का ध्यान हटाने के लिए पथराव का सिलसिला जारी रहा, तो सेना इन आम नौजवानों को भी लड़ाका मानकर इनके खिलाफ कार्रवाई करेगी. सेना प्रमुख की धमकी के बावजूद आम युवाओं ने क्रैक डाउन या झड़पों के दौरान सेना पर पथराव का सिलसिला बंद नहीं किया. सेना प्रमुख की वार्निंग के दो दिनों बाद ही नौजवानों ने दक्षिणी कश्मीर में मिलिटेंटों के खिलाफ़ सेना की कार्रवाई में बाधा डालने के लिए इतना पथराव किया कि सेना को ऑपरेशन समेट कर वापस जाना पड़ा. इस स्थिति से साफ ज़ाहिर है कि आने वाले दिनों में घाटी में सुरक्षा एजेंसियों और लड़ाकों, दोनों ओर से सख्ती देखने को मिल सकती है.

विवादित बयानों के कारण आए दिन ख़बरों में रहने वाले विधायक इंजीनियर रशीद का कहना है कि दोनों ओर से कट्टरता की जो लहर देखने को मिल रही है, उसके कारण संभव है कि आने वाले समय में स्थिति मुस्लिम कश्मीर बनाम हिन्दु भारत की लहर में बदल जाएगी. उन्होंने कहा कि सच्चाई यह है कि मोदी सरकार की नीतियों की वजह से पूरे भारत में राष्ट्रीयता का नैरेटिव बदल गया है. मुझे आशंका है कि आने वाले दिनों में भारत में केवल हिन्दुओं को ही राष्ट्रवादी माना जाएगा. ऐसे हालात में कश्मीरियों को सबक़ सिखाना भारत सरकार का एक मिशन बन जाएगा और यहां अत्याचार व हिंसा का बाज़ार गरम होगा. हर गुज़रने वाले दिन के साथ ताक़तवर बनने वाली भाजपा सरकार अगर कश्मीर के आंदोलन को कुचलने के लिए बेतहाशा ताक़त का इस्तेमाल करने का फैसला करती है, तो विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि कश्मीर में मौत, अत्याचार व हिंसा का ग्राफ बहुत हद तक बढ़ जाएगा. ■

घाटी में पिछले कुछ महीनों से सेना और लड़ाकों के बीच मुठभेड़ों के दौरान आम युवाओं की ओर से सेना पर पथराव की घटनाएं बढ़ रही हैं. झड़पों के दौरान सेना का ध्यान भटकाने और लड़ाकों को भागने का मौका देने के लिए आम कश्मीरी युवा पथराव कर रहे हैं. सेना प्रमुख बिपिन रावत ने इसी सिलसिले में धमकी दी है कि अगर एनकाउंटर साइट्स पर सेना का ध्यान हटाने के लिए पथराव का सिलसिला जारी रहा, तो सेना इन आम नौजवानों को भी लड़ाका मानकर इनके खिलाफ कार्रवाई करेगी. सेना प्रमुख की धमकी के बावजूद आम युवाओं ने क्रैक डाउन या झड़पों के दौरान सेना पर पथराव का सिलसिला बंद नहीं किया. सेना प्रमुख की वार्निंग के दो दिनों बाद ही नौजवानों ने दक्षिणी कश्मीर में मिलिटेंटों के खिलाफ़ सेना की कार्रवाई में बाधा डालने के लिए इतना पथराव किया कि सेना को ऑपरेशन समेट कर वापस जाना पड़ा. इस स्थिति से साफ ज़ाहिर है कि आने वाले दिनों में घाटी में सुरक्षा एजेंसियों और लड़ाकों, दोनों ओर से सख्ती देखने को मिल सकती है.

feedback@chauthiduniya.com

बागमती को बांधने की कोशिश

तटबंध निर्माण के ख़िलाफ़ उभरता जनाक्रोश

जब तटबंध नहीं थे, तब बागमती द्वारा लाए गए गाद नदी के दोनों ओर लगभग 12 किलोमीटर की चौड़ाई में फ़ैल जाते थे और खेतों में उपजाऊ मिट्टी बिछ जाती थी. लोगों का घर धन-धान्य से भरा रहता था. बाहर जाकर कमाने की जरूरत नहीं होती थी. तब कटनी, रोपनी के लिए बाहर से लोगों को बुलाना पड़ता था, जैसे आज पंजाब में बुलाते हैं. महिलाएं हाथ जोड़कर विनती करती थीं- हे बागमती मइया, बाढ़ ले कर मेरे गांव में आइए और हमें खुशहाल बनाइए. लोग कहते थे- बाढ़े जीली, सुखारे मरली. बच्चे नाव पर चढ़कर झिझिया खेलते थे, उत्सव मनाते थे. तटबंधों के कारण नदी तीन किलोमीटर की चौड़ाई में कैद हो गई. लोगों का मानना है कि बागमती योजना मात्र तटबंध बनाकर अफसरों को मालामाल करने की योजना है.

कुमार कृष्णन

तटबंधों के निर्माण के संघर्ष पहले विस्थापन के मुद्दे पर केन्द्रित हुआ करते थे, लेकिन प्रकृति की रक्षा की पारिस्थितिकीय अनिवार्यता ने इस संघर्ष में एक नया आयाम जोड़ा है. नेपाल से निकलने वाली बागमती नदी को कई दशकों से बांधा जा रहा है. बागमती पर बनाए गए पहले के बांधों के दुष्परिणाम को देखते हुए अब लोग बांधों के विरोध में खुलकर सामने आ रहे हैं. एक नए तटबंध निर्माण को लेकर बिहार के कई जिलों में लोगों का खासा विरोध देखने को मिल रहा है. लोगों का कहना है कि यदि यह तटबंध बनता है, तो मुजफ्फरपुर, दरभंगा व समस्तीपुर के 120 से ज्यादा गांव बर्बाद हो जाएंगे. सैकड़ों गांव और लाखों की संख्या में आबादी विस्थापित होगी और खेती के लिए जमीन मिलनी मुश्किल हो जाएगी. जहां तक बांध का निर्माण हुआ है, वहां के लोगों की परेशानियों और तबाही को देखकर लोग डरे हुए हैं. लोगों का मानना है कि यह एक विनाशकारी परियोजना है. इसलिए व्यापक स्तर पर इसका विरोध हो रहा है. बागमती तटबंध के निर्माण के खिलाफ जनाक्रोश अब सड़कों पर भी दिख रहा है. विरोध के रूप में सड़क जाम और सत्याग्रह का सिलसिला आरंभ हो गया है. आक्रोशित लोगों ने राज्य के प्रमुख राष्ट्रीय राजमार्ग एनएच-57 पर गायघाट के बेनिबाद केवटसा चौक पर चक्का जाम कर के अपना विरोध दर्ज कराया. लोगों के इस व्यापक विरोध को देखते हुए उप विकास आयुक्त अरविंद कुमार वर्मा सामने आए और मामले को शांत कराया. लेकिन इस बड़े अहिंसक आंदोलन ने सरकार को अपनी ताकत का अहसास करा दिया है.

बागमती योजना आधी शताब्दी पुरानी है. 46 साल बाद भी यह परियोजना पूरी नहीं हो सकी है. वर्ष 1970 में भारत-नेपाल बॉर्डर से रुन्नीसैदपुर तक करीब 77 किलोमीटर तटबंध का निर्माण हुआ, लेकिन बाद में इस पर ब्रेक लग गया. वर्ष 2006 में एक बार फिर से इस परियोजना पर काम शुरू हुआ. इस बार रुन्नीसैदपुर से सोमरमार हाट तक तटबंध का निर्माण हुआ. उसी साल मुजफ्फरपुर में भी तटबंध निर्माण का काम शुरू हुआ, जो काफी हद तक पूरा हो चुका है. गायघाट में भी तटबंध बनना है, लेकिन स्थानीय लोग इसका लगातार विरोध कर रहे हैं. यह विरोध परियोजना के आरंभ से ही हो रहा है. बागमती तटबंध बनने से पहले बिहार सरकार ने बागमती घाटी का एक क्षेत्रीय अध्ययन करवाया था. इस अध्ययन की रिपोर्ट में कहा गया था कि बागमती भारत के बहुत उर्वर क्षेत्र से प्रवाहित होती है. इस क्षेत्र के प्रत्येक एकड़ में फसल उगाई जाती है और यहां के जमीनों की उर्वरता प्रति वर्ष बाढ़ों के कारण ताजा हो जाती है. यह क्षेत्र बाढ़ के बिना फल फूल नहीं सकता है. वे क्षेत्र जहां बागमती की गाद नहीं पड़ती है, धीरे-धीरे अपनी उर्वरा शक्ति खोते जा रहे हैं. वहीं, वे क्षेत्र जिन पर बागमती की गाद पड़ती है, या जो बागमती की बाढ़ के चपेट में आते हैं, उर्वर हो जाते हैं. अतः समस्या बाढ़ को रोकने की नहीं, अपितु अतिरिक्त पानी के सरल प्रवाह और सिंचाई सुविधा प्रदान करने की है. इस अध्ययन में बागमती क्षेत्र की समस्याओं के पूर्ण समाधान के लिए नेपाल के नुनथर के पास बहुद्देशीय बांध के निर्माण का सुझाव दिया गया था. जनवरी 1956 में केंद्रीय जल विधुत आयोग के तत्कालीन मुख्य अभियंता डॉ के. एल. राव तथा बिहार के सिंचाई विभाग के मुख्य अभियंता एच. के. श्रीनिवास ने भी बागमती की पूरी लंबाई का क्षेत्रीय अध्ययन किया था. वे लोग नेपाल में नूनथर भी गए थे, जहां बागमती पर बहुद्देशीय बांध बनाने का प्रस्ताव था. डॉ राव का मानना था कि नूनथर बांध के साथ धाराओं के पुनरूद्धार के जरिए पानी की निकासी ही समस्या का स्थायी समाधान है. लेकिन इस परियोजना के कार्यान्वयन में स्थानीय अध्ययन और देश के जाने माने विशेषज्ञों के राय की अवहेलना की गई. बिहार के मुजफ्फरपुर जिले में जब तटबंध का काम शुरू हुआ, तो वहां इसके विरोध में एक आंदोलन खड़ा हो गया है. आंदोलन की शुरुआत रामवृक्ष बेनीपुरी के गांव से लगे मुजफ्फरपुर के कटरा प्रखंड के गंगिया गांव से हुई. हिंदी के मूर्धन्य साहित्यकार रामवृक्ष बेनीपुरी का आशियाना इस तटबंध की भेंट चढ़ चुका है. उस इलाके के स्कूल, मंदिर, मस्जिद सब जमींदोज हो चुके हैं. अगर तटबंध का निर्माण नहीं रुका, तो रामदयालु बाबू का गांव और उनका बनाया हुआ स्कूल, सब जमींदोज हो जाएंगे. सवाल यह है कि जब स्थानीय नागरिकों को यह बांध नहीं चाहिए तो सरकार इसे बनाने पर आमादा क्यों है?

तटबंध निर्माण के विरोध के लिए लोगों ने वर्ष 2012 में बागमती बचाओ संघर्ष समिति का गठन किया, जो लगातार सक्रिय है. विरोध के कारण अभी तक गायघाट में तटबंध का निर्माण शुरू नहीं हो सका है. इससे पूर्व समाजसेवी अनिल प्रकाश, पूर्व डीजीपी रामचंद्र खान, पूर्व विधायक महेश्वर प्रसाद यादव, जदयू नेता डॉ. हरेंद्र कुमार, विजय कुमार, वीरेंद्र कुमार राय व रणजीव तत्कालीन जल संसाधन मंत्री विजय चौधरी को मुजफ्फरपुर में बागमती नदी पर तटबंध बनाए जाने के खतरों से अवगत करा चुके हैं. तब मंत्री ने कहा था कि सरकार बांधों और तटबंधों के विकल्प की तलाश कर रही है और तटबंधों का निर्माण कराना सरकार की पसंद नहीं विवशता है. कटरा में अधूरे काम को पूरा करने के लिए इस साल 28 जनवरी को एजेंसी ने सामान गिराया, लेकिन संघर्ष समिति के लोग वहां पहुंच गए व एजेंसी के टेंट को उखाड़ दिया. वाहनों को भी वहां से वापस भेज दिया गया. मामले में चास बास बचाओ संघर्ष मोर्चा के संयोजक जितेंद्र यादव सहित अन्य लोगों पर प्राथमिकी भी दर्ज कराई गई है. लोगों का कहना है कि बांध विनाशकारी हैं. नदियों को खुला छोड़ देना चाहिए और नदियों की पेटी में जमे गाद को निकालने की व्यवस्था की जानी चाहिए. विरोध का दूसरा कारण विस्थापित लोगों के पुनर्वास की लंबी प्रक्रिया को लेकर है. औराई, कटरा में तटबंध निर्माण से 44 गांव के लोग विस्थापित हुए हैं. विस्थापितों के पुनर्वास और मुआवजे में अनियमितता भी सामने आई है. इस पर मुजफ्फरपुर के जिलाधिकारी धर्मेंद्र सिंह का कहना है कि सभी को ठीक किया जा रहा है.

बागमती और इस पर तटबंधों के निर्माण को लेकर पटना में एक सेमिनार आयोजित किया गया था. इस सेमिनार में आई आई टी कानपुर के भूगर्भ विज्ञान के विभागाध्यक्ष राजीव सिन्हा, नेपाल के उच्चस्तरीय संस्थान इसिमोड के प्रतिनिधि डॉ डी.के मिश्रा तथा तेजस विमान को डिजाइन करने वाले डॉ मानस बिहारी वर्मा सहित कई लोग शामिल हुए थे. इस सेमिनार में तत्कालीन जल संसाधन मंत्री विजय चौधरी ने ही बागमती तटबंधों पर सवाल खड़ा किया था. उन्होंने कहा था कि ऐसे बांध जब कई बार टूट चुके हैं, फिर इनकी जरूरत ही क्या है? इन पर पैसा क्यों बर्बाद किया जाता है? अस्सी के दशक में गंगा की जमींदारी के खिलाफ आंदोलन छेड़ने वाले संगठन गंगा मुक्ति आंदोलन के प्रमुख नेता अनिल प्रकाश इस तटबंध विरोध अभियान के संचालकों में शामिल हैं. इनका कहना है, बागमती नदी के जिन-जिन हिस्सों में डैम बने, वहां के लोग उजड़ गए. बांध जल प्रलय को बढ़ावा देते हैं. हमें नदी के साथ रहने की आदत है, बांध की कोई जरूरत नहीं है. बागमती पर बांध गैर जरूरी व अवैज्ञानिक हैं. इस मामले में नदी व बाढ़ विशेषज्ञ डॉ. दिनेश कुमार मिश्र का मानना है कि तटबंध बांध कर नदियों को नियंत्रित करने की जगह सरकार इनके पानी की निर्बाध रूप से निकासी की व्यवस्था करे. तटबंध पानी की निकासी को प्रभावित करते हैं. टूटने पर जान-माल की व्यापक क्षति होती है.

सीतामढ़ी जिले में बागमती पर सबसे पहला तटबंध बनने से मसहा आलम गांव प्रभावित हुआ था. उस गांव के 400 परिवारों को अब तक पुनर्वास का लाभ नहीं मिला है और रुन्नीसैदपुर से शिवनगर तक के 1600 परिवार पुनर्वास के लाभ के लिए भटक रहे हैं. दोनों तटबंधों के बीच गाद भरने की भी एक बड़ी समस्या है. रक्सिया में तटबंध के बीच एक 16 फीट ऊंचा टीला था, जो बालू में दबने के बाद मात्र तीन फीट बचा है. बागमती नदी बार-बार अपनी धारा बदलती है. बागमती के जिन-जिन हिस्सों में डैम बनाए गए, वहां के लोग उजड़ गए हैं. तटबंध के बाहर भी जलजमाव होने लगा है. मनुषमारा, लखनदेई आदि सहायक नदियों के पानी का निकास बंद हो जाने के कारण जलजमाव की समस्या उत्पन हो गई है. बागमती क्षेत्र के शिवहर, सीतामढ़ी, मुजफ्फरपुर, समस्तीपुर, दरभंगा, सुपौल, खगड़िया आदि जिलों के सैकड़ों गांव लोगों के लिए काला पानी में तब्दील होते जा रहे हैं. बागमती पहले हर साल 12 किलोमीटर की चौड़ाई में उपजाऊ मिट्टी बिछा देती थी. लोग खुशहाल थे, लेकिन जब से इस नदी को तटबंधों के माध्यम से तीन किलोमीटर के दायरे में कैद करने का सिलसिला शुरू हुआ, राज्य से पलायन तेज हो गया है. भागवतपुर गांव के सूरत लाल यादव का कहना है- बागमती को बांधा तो जमीन, घर-द्वार सब कुछ चला जाएगा. बाढ़ से नुकसान से ज्यादा लाभ होता है. दो-चार-दस दिन के कष्ट के बाद तो सब कुछ अच्छा ही होता है. जमीन उपजाऊ हो जाती है, पैदावार अधिक हो जाता है. बंसघत्ता के रौदी पंडित के मुताबिक बांध बनने से बांध के बाहर के जमीन की कीमत दो लाख प्रति कट्ठा हो गई है, जबकि बांध के अंदर की जमीन का भाव 15 हजार रुपए प्रति कट्ठा ही है. गंगिया के रंजन कुमार सिंह ने कहा- बांध के बनने से उसके भीतर मेरा 10 एकड़ जमीन आ जाएगा और हम बर्बाद हो जाएंगे. जब तटबंध नहीं थे, तो बागमती द्वारा लाए गए गाद नदी के दोनों और लगभग 12 किलोमीटर की चौड़ाई में फ़ैल जाते थे और खेतों में उपजाऊ मिट्टी बिछ जाती थी. लोगों का घर धन-धान्य से भरा रहता था. बाहर जाकर कमाने की जरूरत नहीं होती थी. तब कटनी, रोपनी के लिए बाहर से लोगों को बुलाना पड़ता था, जैसे आज पंजाब में बुलाते हैं. महिलाएं हाथ जोड़कर विनती करती थीं- हे बागमती मइया, बाढ़ ले कर मेरे गांव में आइए और हमें खुशहाल बनाइए. लोग कहते थे- बाढ़े जीली, सुखारे मरली. बच्चे नाव पर चढ़कर झिझिया खेलते थे, उत्सव मनाते थे. तटबंधों के कारण नदी तीन किलोमीटर की चौड़ाई में कैद हो गई. लोगों का मानना है कि बागमती योजना मात्र तटबंध बनाकर अफसरों को मालामाल करने की योजना है. मुजफ्फरपुर के जिलाधिकारी भी बांध की निरर्थकता पर सरकार को पत्र लिख चुके हैं. लेकिन अभियंता, मंत्री, ठेकेदार और वे अफसर जिनका इस तटबंध निर्माण में स्वार्थ छुपा है, वे बांध बनवाने पर अमादा हैं, बिना इसकी परवाह किए कि इससे लाभ से ज्यादा हानि की संभावना है. ■

feedback@chauthiduniya.com

> "बागमती नदी के जिन-जिन हिस्सों में डैम बने, वहां के लोग उजड़ गए. बांध जल प्रलय को बढ़ावा देते हैं. हमें नदी के साथ रहने की आदत है, बांध की कोई जरूरत नहीं है. बागमती पर बांध गैर जरूरी व अवैज्ञानिक हैं.
>
> *-अनिल प्रकाश, प्रमुख नेता, गंगा मुक्ति आंदोलन*"

बिहार के लिए वरदान है बागमती

हिमालय के दक्षिणी ढलान पर काठमांडू के पास लगभग आठ हजार मीटर की ऊंचाई के गोसाई नाथ के शिखर से बागमती निकलती है. भारत में गंगा की तरह नेपाल में बागमती भी बहुत ही पवित्र नदी मानी जाती है. नेपाल के सभी राजाओं का दाह-संस्कार बागमती के तट पर ही हुआ है. नेपाल के गौर नामक गांव के बाद बागमती भारत में प्रवेश करती है. बिहार के सीतामढ़ी जिले का आदम बांध गांव भारत में बागमती का प्रवेश द्वार है. इसी गांव से आगे यह नदी सीतामढ़ी, दरभंगा, सहरसा, और खगड़िया जिलों से प्रवाहित होते हुए गंगा में मिलती है. नेपाल में 7,080 वर्ग किलोमीटर तथा बिहार में 6,320 वर्ग किलोमीटर के साथ बागमती का कुल जलग्रहण क्षेत्र 13,400 वर्ग किलोमीटर है. नेपाल में काठमांडू से पहले या उसके आस-पास बागमती में मुख्यत: सात हिमालयी नदियां ह्नुमती, मनोहरा, मणिमती, विष्णुमती, भद्रमती, रूद्रमति और धोबीखोला आकर मिलती हैं. शायद इसी कारण नेपाल के कुछ इलाकों में बागमती को सप्त बागमती के नाम से भी जाना जाता है. हिमालय से निकलने वाली लाल बकैया, लखनदेई और अधवारा समूह की नदियां बागमती के भारतीय प्रवाह क्षेत्र की प्रमुख सहायक नदियां हैं. लाल बकैया सीतामढ़ी के पिपराही प्रखंड के अदउरी गांव में बागमती से संगम करती है, जबकि लखनदेई कटरा गांव के पास इसमें मिलती है. अधवारा समूह की नदियां आपस में मिलती हुई, दरभंगा के हायाघाट के पास इस नदी में विलीन होती हैं. अधवारा समूह की नदियों से संगम के बाद बागमती करेह कहलाती है. हायाघाट के आगे सहरसा मानसी लाईन को बदलाघाट में पार कर कोसी में मिलती हुई यह नदी गंगा में विलीन होती है. बागमती हिमालय से निकलने वाली बिहार की ऐसी अकेली नदी है, जो अपने जल के साथ सबसे अधिक उपजाऊ गाद लाती है. बाढ़ के समय इसके जल में गाद की मात्रा काफी अधिक होती है. इस कारण बागमती की बाढ़ पूरे इलाके में वरदान मानी जाती है. बागमती की बाढ़ों के कारण इस इलाके की मिट्टी इतनी उर्वर थी कि यहां हमेशा तीन फसलों की खेती का प्रचलन रहा है.■

चौथी दुनिया
प्रपत्र-4
(नियम 8 देखिए)

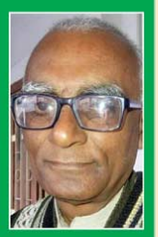

1. प्रकाशन का स्थान	नई दिल्ली
2. प्रकाशन अवधि	साप्ताहिक प्रति रविवार
3. मुद्रक का नाम	रामपाल सिंह भदौरिया
राष्ट्रीयता	
(क) क्या भारत का नागरिक है	हां
(ख) यदि विदेशी है तो मूल देश	XXX
पता	29 डीडीए फ्लैट, चित्रा विहार विकास मार्ग, दिल्ली-110092
4. प्रकाशक का नाम	रामपाल सिंह भदौरिया
(क) क्या भारत का नागरिक है	हां
(ख) यदि विदेशी है तो मूल देश	XXX
पता	29 डीडीए फ्लैट, चित्रा विहार विकास मार्ग, दिल्ली-110092
5. संपादक का नाम	संतोष भारतीय
राष्ट्रीयता	
(क) क्या भारत का नागरिक है	हां
(ख) यदि विदेशी है तो मूल देश	XXX
पता	अंकुश पब्लिकेशंस प्रा.लि. के-2, गेनन, दूसरी मंजिल, चौधरी बिल्डिंग कनॉट प्लेस, नई दिल्ली-110001
6. उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार पत्र के स्वामी हैं एवं कुल पूंजी के एक प्रतिशत से ज़्यादा के साझीदार या शेयरधारक हैं.	अंकुश पब्लिकेशंस प्रा.लि. 98, मित्तल चैम्बर्स, नरीमन प्वाइंट, मुंबई-400021 1. गेनन डंकरली फाइनेंस लिमिटेड, न्यू एक्सेलर बिल्डिंग, तीसरी मंजिल, ए. के. नायक मार्ग, फोर्ट, मुंबई-400001 2. एम आर होल्डिंग लिमिटेड, न्यू एक्सेलर बिल्डिंग, तीसरी मंजिल, ए. के. नायक मार्ग, फोर्ट, मुंबई-400001 3. डेली मल्टी मीडिया लिमिटेड, 98 मित्तल चैम्बर्स, नरीमन प्वाइंट, मुंबई-400021

मैं रामपाल सिंह भदौरिया एतदद्वारा घोषित करता हूं कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं.

01-03-2017

हस्ताक्षर
रामपाल सिंह भदौरिया
प्रकाशक

विधानसभा चुनाव परिणाम

सच साबित हुई चौथी दुनिया में प्रकाशित टैरो कार्ड भविष्यवाणी

विधानसभा चुनाव से पहले चौथी दुनिया ने टैरो कार्ड और ज्योतिषीय गणना के माध्यम से चुनाव परिणाम और चुनाव से संबंधित नेताओं की भविष्यवाणी की थी. मशहूर टैरो कार्ड रीडर अलंकृता मानवी और ज्योतिषी डॉ. कुमार गणेश ने चौथी दुनिया के लिए लिखे गए कॉलम में विधानसभा चुनाव परिणामों का आकलन किया था. हम आपको बता रहे हैं कि ये भविष्यवाणी क्या थी, जो बिल्कुल सटीक साबित हुई है.

चौथी दुनिया ब्यूरो

मशहूर टैरो कार्ड रीडर अलंकृता मानवी ने उत्तर प्रदेश के बारे में बताया था कि यहां के तत्कालीन मुख्यमंत्री अखिलेश यादव का कार्ड (तारा द वर्ल्ड कार्ड) न्यूट्रल कार्ड है, जो इनके मुख्यमंत्री बनने के अवसर को काफी कम कर देता है. इनका एक कार्ड ओल्ड मैन कार्ड भी था, जो बताता है कि नकारात्मकता की वजह से ही घर में पिता के साथ झगड़ा हुआ, इसका भी बुरा असर पड़ेगा. मायावती के बारे में इन्होंने बताया था कि इनका कार्ड (मिसफॉर्च्यून कार्ड) इस चुनाव में इनके लिए डाउनफॉल दिखाता है. चुनाव परिणाम से भी यह बात सही साबित हुई. केशव मौर्या के लिए मदर कार्ड आया था, जो इनके लिए अच्छा संकेत दे रहा था. अलंकृता मानवी के मुताबिक उत्तर प्रदेश के चुनावी तस्वीर में बने रहने के लिए इन्हें काफी मेहनत करने की जरूरत थी, जो इन्होंने की भी. कार्ड के मुताबिक इनका भविष्य अच्छा है. राजनाथ सिंह के लिए इन्होंने बताया था कि इनका कार्ड, जिसे व्हील ऑफ फॉर्च्यून कार्ड कहते हैं, इनके लिए शुभ संकेत दे रहा है. उत्तर प्रदेश चुनाव के बाद इनमें सुखद बदलाव आएगा. राजनाथ सिंह उत्तर प्रदेश में सामने आ सकते हैं.

पंजाब चुनाव के लिए अलंकृता मानवी ने बताया था कि प्रकाश सिंह बादल का कार्ड लिमिटेशंस बता रहा है और यह चुनाव उनके लिए फायदेमंद नहीं होने जा रहा है. परिणाम से भी यह अनुमान सच साबित हुआ. सुखबीर सिंह बादल का कार्ड आया था पिग कार्ड. यह एक नकारात्मक कार्ड है, जिसकी वजह से यह अनुमान लगाया गया था कि सुखबीर सिंह बादल हाल-फिलहाल मुख्यमंत्री तो नहीं ही बन पाएंगे और ऐसा हुआ भी. कैप्टन अमरिंदर सिंह के लिए फिलिंग कार्ड आया था, जो बता रहा था कि इनकी छवि में सुधार आएगा, उन्हें इसके लिए मेहनत करनी पड़ेगी. मुख्यमंत्री पद की बात करें, तो कह सकते हैं कि इनके अवसर सकारात्मक हैं. ये अनुमान भी सच साबित हुआ. नवजोत सिंह सिद्धू के लिए डाउनफॉल कार्ड आया था. अलंकृता मानवी ने बताया था कि इनके लिए आगे कुछ बहुत अच्छा नहीं होने जा रहा है. अब परिणाम भले ही कांग्रेस के पक्ष में आया है, लेकिन वे जो चाहते थे वो उन्हें नहीं मिला. अरविंद केजरीवाल का कार्ड लिमिटेशन कार्ड था, जिसके अनुसार बताया गया था कि जैसा परिणाम वे सोच रहे हैं, वैसा होगा नहीं. इनके लिए एक स्पष्ट जीत के आसार नहीं दिख रहे हैं. चुनाव परिणाम में यह सच साबित हुआ.

मनोहर पर्रिकर के कार्ड का नाम था, जस्टिस कार्ड. इस कार्ड के अनुसार बताया गया था कि वे जितना अच्छा काम करेंगे, उतना ही अच्छा परिणाम मिलेगा और उन्हें परिणाम मिला भी. उन्हें गोवा का मुख्यमंत्री बनाया गया है. गोवा में अरविंद केजरीवाल के लिए डाउनफॉल कार्ड था, जिसका असर चुनाव परिणाम में भी दिखा. यहां आप का खाता तक नहीं खुला. मणिपुर में भाजपा के नाम से फाइव ऑफ ज्वेल्स कार्ड आया था, जिसके अनुसार बताया गया था कि मणिपुर में पार्टी का भविष्य अच्छा है.

राष्ट्रीय नेताओं की बात करें, तो नरेंद्र मोदी के लिए एलीफैंट कार्ड आया था, जिसके अनुसार बताया गया था कि पांच राज्यों के चुनाव के बाद नरेंद्र मोदी की ताकत में इजाफा होगा. जाहिर है, ऐसा हुआ भी. राहुल गांधी का कार्ड बता रहा था कि वे भावनात्मक रूप से कमजोर हुए है. उन्हें ऐसा लग रहा है कि सब कुछ अच्छा हो रहा है या होगा, लेकिन अंत में परिणाम अच्छा नहीं निकलेगा. जाहिर है, चुनाव परिणामों से

यह सही भी साबित हुआ. प्रियंका गांधी का कार्ड बता रहा था कि इन्हें वरिष्ठ लोगों से सलाह लेने की जरूरत है. अभी भी इनमें परिपक्वता की कमी है. अमित शाह का जो कार्ड था, उसके मुताबिक उन्हें कुछ मजबूत, कठोर और प्रमुख निर्णय लेने थे. जाहिर है, उन्होंने ऐसे निर्णय लिए भी, जिसका असर चुनाव परिणामों में दिखा.

ज्योतिषीय गणना भी सच साबित हुई

डॉ. कुमार गणेश ने उत्तर प्रदेश में भाजपा के चमत्कारिक प्रदर्शन की बात कही थी, जो पूर्णतः सच साबित हुई. उनकी गणना से स्पष्ट था कि उत्तर प्रदेश में फिर से समाजवादी पार्टी की सरकार बनती नहीं दिख रही है. इस सरकार को विदा होना होगा. एक लंबे अर्से बाद भाजपा चमत्कारिक प्रदर्शन कर नंबर एक के स्थान पर बैठती दिख रही है. इसलिए उत्तर प्रदेश के

सिंहासन पर इस बार नया मुख्यमंत्री देखने को मिल सकता है.

पंजाब के लिए इन्होंने कहा था कि इस बार कांग्रेस की बल्ले-बल्ले रहेगी और ऐसा हुआ भी. इन्होंने कहा था कि पंजाब में इस बार चुनाव त्रिकोणीय है. सत्तारूढ़ शिरोमणि अकाली दल-भारतीय जनता पार्टी गठबंधन व कांग्रेस के बीच कूद कर आम आदमी पार्टी ने इस बार के दंगल को बहुत दिलचस्प बना दिया है. इस बार पंजाब की सत्ता का चेहरा बदलने जा रहा है. दस बरसों से लगातार सत्ता में रहने वाला अकाली-भाजपा गठबंधन सत्ता से बाहर होगा और कांग्रेस सबसे बड़ी पार्टी के रूप में सत्ता पर काबिज होने के सबसे नजदीक रहेगी. मणिपुर के लिए इन्होंने कहा था कि यहां इस बार त्रिशंकु विधानसभा होगी. इस त्रिशंकु विधानसभा में कांग्रेस सबसे बड़ी पार्टी के रूप में उभरती दिख रही है. भारतीय जनता पार्टी इस राज्य में पहली बार भारी-भरकम जीत दर्ज करने जा रही है. गोवा में भी इन्होंने त्रिशंकु विधान सभा की बात कही थी.

feedback@chauthiduniya.com

जन्मांक के हिसाब से इस सप्ताह आपका भविष्यफल

क्या कहता है आपका टैरो कार्ड

अलंकृता मानवी
लेखिका मशहूर टैरो कार्ड रीडर हैं. आप भी अगर टैरो कार्ड के ज़रिए अपना भविष्य जानना चाहते हैं, तो संपर्क करें- astro@chauthiduniya.com

जन्मांक 1: (जिनका जन्म 1, 19, 28 तारीख को हुआ है. इस जन्मांक का स्वामी ग्रह सूर्य है)

इस सप्ताह के लिए आपका कार्ड है, एस ऑफ लोटसेज. इस हफ्ते आपका मन पवित्र रहेगा. आपको सफलता मिलेगी. आप जो भी विश (इच्छा) करेंगे, वो पूरी होगी. आप इस सप्ताह कोई अच्छा संकल्प लें.

जन्मांक 2: (जिनका जन्म 2, 11, 20, 29 तारीख को हुआ है. इस जन्मांक का स्वामी ग्रह चन्द्रमा है)

इस सप्ताह के लिए आपका कार्ड है, फोर ऑफ ज्वेल्स. इस सप्ताह आप अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन करें. अपनी प्रतिभा को, अपनी बात को, अपने तक समेट कर न रखें. उदारता दिखाएं, दान-पुण्य करें. यह सप्ताह आपके लिए बेहतर रहेगा.

जन्मांक 3: (जिनका जन्म 3, 12, 21, 30 तारीख को हुआ है. इस जन्मांक का स्वामी ग्रह बृहस्पति है)

इस सप्ताह के लिए आपका कार्ड है, तारा द वर्ल्ड कार्ड. यह शुभ कार्ड है. यात्रा, पैसा, प्रमोशन का योग बन रहा है. आपको सफलता भी मिल सकती है. आपका अच्छा समय आने वाला है.

जन्मांक 4: (जिनका जन्म 4, 13, 22, 31 तारीख को हुआ है. इस जन्मांक का स्वामी ग्रह है यूरेनस यानी अरुण ग्रह)

इस सप्ताह के लिए आपका कार्ड है, माया-द मदर कार्ड. ये कार्ड बताता है कि इस सप्ताह आपके जीवन मे नए रिश्ते बनेंगे. संबंधों में सुधार आएगा. पुराने घाव भरेंगे. आपके लिए नई दिशाएं खुलेंगी.

जन्मांक 5: (जिनका जन्म 5, 14, 23 तारीख को हुआ है. इस जन्मांक का स्वामी ग्रह बुध है)

इस सप्ताह के लिए आपका कार्ड है, सेवन ऑफ वज्रा. इस सप्ताह आप प्रोफेशनली बोझ महसूस करेंगे. तनाव भी रह सकता है. लेकिन, आप खुद पर बोझ न डालें, न महसूस करें. दिमाग को शांत रखें, थोड़ा ध्यान लगाएं. दैवीय आशीर्वाद प्राप्त करने की कोशिश करें, आपका काम हो जाएगा.

जन्मांक 6: (जिनका जन्म 6, 15, 24 तारीख को हुआ है. इस जन्मांक का स्वामी ग्रह शुक्र है)

इस सप्ताह के लिए आपका कार्ड है, द एनीमल वज्रा. इस सप्ताह आप स्थिरता महसूस करेंगे. आपको सफलता भी मिलेगी. दूसरे से सहयोग मिलेगा. भाग्य भी आपके साथ होगा.

जन्मांक 7: (जिनका जन्म 7, 16, 25 तारीख को हुआ है. इस जन्मांक का स्वामी ग्रह वरुण है)

इस सप्ताह के लिए आपका कार्ड है, थ्री ऑफ वज्रा. इस सप्ताह आप भावनात्मक रूप से तनाव महसूस करेंगे. रिश्तों में थोड़ी परेशानी आ सकती है. इस सप्ताह आप अपने घर में नमक के पौधे लगवाएं. आप फल और वस्त्र का दान भी कर सकते हैं.

जन्मांक 8: (जिनका जन्म 8, 17, 26 तारीख को हुआ है. इस जन्मांक का स्वामी ग्रह शनि है)

इस सप्ताह के लिए आपका कार्ड है, बुद्धा ऑफ वज्रा. ये ताकत को दिखाता हुआ कार्ड है. इस सप्ताह आपकी ताकत में इजाफा होगा. आपका विजन क्लियर रहेगा. काम मे भी स्पष्टता रहेगी.

जन्मांक 9: (जिनका जन्म 9, 18, 27 तारीख को हुआ है. इस जन्मांक का स्वामी ग्रह मंगल है)

इस सप्ताह के लिए आपका कार्ड है, जजमेंट कार्ड. इस सप्ताह आपको सीखने-सिखाने यानी टीचिंग और लर्निंग पर ज्यादा ध्यान देना चाहिए. इन कामों से आपको इस सप्ताह बहुत अधिक फायदा मिल सकता है.

सेलीब्रिटी टैरो कार्ड

इस हफ्ते तापसी पन्नू की फिल्म *नाम शबाना* आ रही है. आइए, जानते हैं कि टैरो कार्ड के हिसाब से इस फिल्म का भविष्य क्या होगा?

तापसी पन्नू

इनका कार्ड है, नाइन ऑफ ज्वेल्स. इसके मुताबिक इनको अचानक कहीं से धन की प्राप्ति हो सकती है. इस मूवी के बाद इनका बेहतर समय आने वाला है.

फिल्म- नाम शबाना

इस फिल्म का कार्ड है, परिनिर्वाण कार्ड. कुल मिला कर ये फिल्म अच्छा परिणाम देगी.

www.kamalmorarka.com

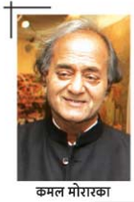

कमल मोरारका

1977 की स्थिति बना कर ही 2019 की लड़ाई लड़ सकते हैं

अब असल मुद्दा ये है कि 2019 में क्या होगा. विपक्ष को क्या करना चाहिए. विपक्ष के नेताओं को बैठना चाहिए. या तो उन्हें अब 2024 के लिए सोचना चाहिए या अगर वे 2019 के बारे में सोचते हैं, तो ये स्थिति आपातकाल के बाद की स्थिति यानी 1977 की तरह होगी. आदर्श को भूल जाइए. भारत के हर निर्वाचन क्षेत्र में भाजपा के खिलाफ सिर्फ एक उम्मीदवार दीजिए. यही एक रास्ता है, जिसके जरिए भाजपा के उदय को रोका जा सकता है. यदि आप ऐसा नहीं करते हैं, तो भाजपा को रोकना आपके लिए संभव नहीं होगा. वे यूपी को जिस तरीके से जीते हैं, उसी तरीके से पूरे देश को जीत लेंगे. अमित शाह मैन ऑफ मिशन हैं. उनसे जब पूछा गया कि आपका अगला मिशन क्या है, तो उन्होंने कहा कि उनका मिशन उन राज्यों में काम करना है, जहां भाजपा नहीं है. भाजपा को एक अखिल भारतीय पार्टी होना चाहिए. मुद्दा ये है कि भाजपा कांग्रेस को एक नेशनल पार्टी के तौर पर रिप्लेस करना चाहती है. हिन्दुइज्म, हिन्दू मन्दिर, किसी भी विवादास्पद मुद्दे को भूल जाइए.

यूपी समेत 5 राज्यों के विधानसभा चुनाव परिणाम आ चुके हैं. लेकिन फोकस उत्तर प्रदेश पर ही है. किसी ने इस तरह के परिणाम की उम्मीद नहीं की थी. यहां तक कि खुद भाजपा ने भी इस परिणाम के बारे में नहीं सोचा था. बीजेपी को यह महसूस हो रहा था कि वे आगे हैं. उनमें से कुछ ने ये कहा था कि उन्हें बहुमत मिलेगा. लेकिन किसी ने भी इस तरह के बहुमत (तीन चौथाई बहुमत) की उम्मीद नहीं की थी. मुद्दा ये है कि इस भारी विजय का कारण क्या रहा? इसका कोई सटीक जवाब तलाशना मुश्किल है, लेकिन कुछ चीजें बिल्कुल सही हैं. पहला ये कि उत्तर प्रदेश की सत्ताधारी पार्टी (समाजवादी पार्टी) का अंतर्कलह खुद को हराने वाला और आत्मघाती रहा. कुछ ने कहा कि युवा को आगे आना चाहिए, अखिलेश को आगे आना चाहिए, कुछ ने ये भी कहा कि मुलायम को आगे आना चाहिए. कहने के लिए ये सब बातें ठीक हैं, लेकिन तथ्य ये है कि यदि आप सिर्फ जातिगत समीकरण के भरोसे रहेंगे, तो आपको वो सफलता नहीं मिलेगी जो आपको चाहिए. यादव बहुल इलाके में आप बुरी तरह से हार गए. उम्रदराज यादवों का कहना था कि आज अखिलेश ने अपने पिता के साथ जो व्यवहार किया है, वैसा ही व्यवहार कल हमारा बेटा हम से कर सकता है. इस तथ्य पर ध्यान देना होगा कि भारतीय समाज एक बहुत ही रूढ़ीवादी समाज है, जहां यादव पिता और पुत्र किसी सिद्धांतहीन विषय के लिए इस तरह खुलेआम लड़ते हुए नहीं दिख सकते. चुनाव आयोग ने अखिलेश यादव और मुलायम सिंह को बुलाया था. अखिलेश के साथ विधायक थे. विधायक ही तो मुख्यमंत्री बनाते हैं. मेरे जैसे लोगों का तो विचार था कि आयोग पार्टी के निशान को फ्रीज (जब्त) कर दे. ये काम ही सही होता. लेकिन मुलायम सिंह यादव ये सोचते हुए नरम पड़ गए कि पार्टी को नुकसान क्यों पहुंचाया जाए. उन्होंने अपना पक्ष मजबूती से नहीं रखा और साइकिल चुनाव चिन्ह अखिलेश यादव को दे दिया गया. लेकिन वे भूल गए कि वोट चुनाव चिन्ह को नहीं मिलते, वोट व्यक्तित्व (पर्सनैलिटी) को मिलते हैं. मुलायम सिंह का व्यक्तित्व अखिलेश यादव से कहीं ऊंचा है. अखिलेश का आकर्षण युवाओं के बीच हो सकता है, उनकी पत्नी का आकर्षण युवा महिलाओं के बीच हो सकता है. लेकिन वे मजबूत पारंपरिक यादव वोट के विकल्प को अपनी जगह से बदल (रिप्लेस) नहीं सकते. इस चुनाव में समाजवादी पार्टी के लिए यही सबक है. ये अपने लोगों के बीच क्या करते हैं, यह देखने वाली बात होती है. अखिलेश विधानसभा के सदस्य नहीं हैं. शिवपाल यादव विधानसभा के सदस्य हैं, उन्हें नेता विपक्ष बनाया जाना चाहिए. अखिलेश यादव चाहते हैं कि आजम खान को नेता विपक्ष बनाया जाए. खैर, सपा का भविष्य इससे तय होगा कि सपा अभी किस तरह से व्यवहार करती है. यूपी में अब चुनाव 5 साल दूर है. लोकसभा का चुनाव दो साल बाद है. सपा को जो सबक मिला है, वो ये है कि आप पिछड़े वर्ग की पार्टी हैं, जब तक आप एक यूनाइटेड फ्रंट नहीं बनाते हैं, तब तक आप बेहतर नहीं कर पाएंगे.

इससे भी बुरी हालत मायावती की पार्टी की हुई है. पिछली बार, जब 2007 में मायावती सत्ता में आई थीं, तब उन्हें अपनी जाति के वोट के साथ ब्राह्मण वोट भी मिले थे. 2012 में वही ब्राह्मण उन्हें छोड़ कर चले गए और 2017 में भी वे मायावती के साथ नहीं आए. जो 22 फीसदी वोट उन्हें मिले हैं, वो उनका कोर वोट है. समाजवादी पार्टी को भी उसका कोर वोट मिला है. यदि ये पारिवारिक झगड़ा नहीं हुआ होता, तो समाजवादी पार्टी और अच्छा कर सकती थी. फिर क्या हुआ? बीजेपी कैसे जीती? क्योंकि यादव, दलित, मुस्लिम आदि का एक हिस्सा और बाकि के ऐसे लोगों जिन्हें किसी पार्टी ने नहीं लुभाया, सब भाजपा के साथ चले गए. इन लोगों ने ये सोचा कि भाजपा की सरकार भी केन्द्र में है. इसमें कोई शक नहीं है कि नरेंद्र मोदी एक बेहतरीन वक्ता हैं. उन्होंने नोटबंदी को जनता के समाने ऐसे पेश किया, जैसे वे अमीरों के खिलाफ हैं और गरीबों के साथ है. लोगों ने इस पर विश्वास किया. नरेंद्र मोदी ने ये कहा कि मेरे आगे-पीछे कोई नहीं है. लोगों ने माना कि इनका कोई परिवार तो है नहीं, ये जो कर रहे हैं वो हमारे लिए ही तो कर रहे हैं. ये बात भारत में मायने रखती है. लेकिन असली परीक्षा तो अब शुरू होगी. चुनाव प्रचार कविता की तरह है और सरकार चलाने का काम एक कहानी की तरह है. पिछले तीन साल में केन्द्र सरकार ने भी कोई बहुत ज्यादा काम नहीं किया है. देखना है कि वे यूपी को कैसे चलाते हैं? उत्तराखंड एक छोटा राज्य है, उसे संभालना आसान है. मणिपुर और गोवा में उन्होंने कांग्रेस की तरह ही सरकार बनाया है. विधायकों की खरीद-फरोख्त का कोई अर्थ नहीं है. पंजाब में नि:सन्देह अकाली-भाजपा को सत्ता से बाहर का रास्ता दिखाया गया है. कैप्टन अमरिंदर सिंह को 5 साल के लिए सत्ता मिली है.

अब असल मुद्दा ये है कि 2019 में क्या होगा. विपक्ष को क्या करना चाहिए. विपक्ष के नेताओं को बैठना चाहिए. या तो उन्हें अब 2024 के लिए सोचना चाहिए या अगर वे 2019 के बारे में सोचते हैं, तो ये स्थिति आपातकाल के बाद की स्थिति यानी 1977 की तरह होगी. आदर्श को भूल जाइए. भारत के हर निर्वाचन क्षेत्र में भाजपा के खिलाफ सिर्फ एक उम्मीदवार दीजिए. यही एक रास्ता है, जिसके जरिए भाजपा के उदय को रोका जा सकता है. यदि आप ऐसा नहीं करते हैं, तो भाजपा को रोकना आपके लिए संभव नहीं होगा. वे यूपी को जिस तरीके से जीते हैं, उसी तरीके से पूरे देश को जीत लेंगे. अमित शाह मैन ऑफ मिशन हैं. उनसे जब पूछा गया कि आपका अगला मिशन क्या है, तो उन्होंने कहा कि उनका

> **मैं नहीं समझता कि आरएसएस का मन्दिर मुद्दा भाजपा के लिए महत्व रखता है. हाल ही में जब अमित शाह से इस बारे में पूछा गया, तो उन्होंने कहा कि राम मन्दिर हमारे घोषणा पत्र में नहीं है. हमारे लिए घोषणा पत्र महत्वपूर्ण है. इसका मतलब है कि उन्होंने इस मुद्दे को छोड़ दिया है. सांप्रदायिक सद्भाव के लिए ये एक अच्छी बात है. लेकिन देश के लिए ये जानना जरूरी है कि सरकार का लक्ष्य क्या है. जिन्ना ने कांग्रेस को हिन्दू पार्टी कहा था और कांग्रेस खुद को सेकुलर कहती रही. भाजपा इसे मुस्लिम तुष्टिकरण बताती है. जिन्ना ने कांग्रेस को हमेशा हिन्दू पार्टी कहा. बहुत हद तक ये सही भी है.**

मिशन उन राज्यों में काम करना है, जहां भाजपा नहीं है. भाजपा को एक अखिल भारतीय पार्टी होना चाहिए. मुद्दा ये है कि भाजपा कांग्रेस को एक नेशनल पार्टी के तौर पर रिप्लेस करना चाहती है. हिन्दुइज्म, हिन्दू मन्दिर, किसी भी विवादास्पद मुद्दे को भूल जाइए. भाजपा भी उसी तरह के लोगों की पार्टी है, जिस तरह के लोगों से मिल कर कांग्रेस बनी थी, मॉडरेट, मॉडर्न. गोवा में उन्होंने दिखा दिया कि एथिक्स और मोरल वैल्यूज (नैतिक मूल्यों) का कोई महत्व नहीं है. उनके लिए भी राजनीति एक बिजनेस है, उनके साथ जाइए, मिलिए, मिल कर सरकार बनाइए.

मैं नहीं समझता कि आरएसएस का मन्दिर मुद्दा भाजपा के लिए महत्व रखता है. हाल ही में जब अमित शाह से इस बारे में पूछा गया, तो उन्होंने कहा कि राम मन्दिर हमारे घोषणा पत्र में नहीं है. हमारे लिए घोषणा पत्र महत्वपूर्ण है. इसका मतलब है कि उन्होंने इस मुद्दे को छोड़ दिया है. सांप्रदायिक सद्भाव के लिए ये एक अच्छी बात है. लेकिन देश के लिए ये जानना जरूरी है कि सरकार का लक्ष्य क्या है. जिन्ना ने कांग्रेस को हिन्दू पार्टी कहा था और कांग्रेस खुद को सेकुलर कहती रही. भाजपा इसे मुस्लिम तुष्टिकरण बताती है. जिन्ना ने कांग्रेस को हमेशा हिन्दू पार्टी कहा. बहुत हद तक ये सही भी है. वास्तव में कांग्रेस ने मुस्लिमों के लिए किया क्या है? क्या मुस्लिम समुदाय में शिक्षा का स्तर बढ़ा. पश्चिम बंगाल में 38 फीसदी मुस्लिम हैं. वहां वामपंथी सरकार ने 35 साल शासन किया. क्या मुस्लिमों के बीच शिक्षा का स्तर बढ़ा? उनकी हालत में सुधार हुआ? नहीं. कौन जानता है, सच क्या है? लेकिन किसी ने कहा है कि यूपी में मुस्लिमों ने सोचा कि 2007 में हमने मायावती को वोट दिया, उन्होंने हमारे लिया कुछ नहीं किया, 2012 में हमने मुलायम सिंह यादव को वोट दिया, उन्होंने भी हमारे लिए कुछ नहीं किया, इसलिए चलो एक बार इन्हें (भाजपा) भी आजमा कर देख लेते हैं. ऐसा है, तो इन लोगों ने विकल्प के तौर पर भाजपा को वोट दिया है. 5 साल तक इन्हें भी देखेंगे. सच क्या है, कोई नहीं जानता. सच सामने आएगा भी नहीं और न ही कोई ये पूछने जाएगा कि आपने एक खास पार्टी को वोट क्यों दिया? बहरहाल, राष्ट्रीय स्तर के विपक्षी नेताओं को एक साथ मिल कर बैठना चाहिए और इस पर विचार करना चाहिए कि क्या एक सांझा दृष्टिकोण विकसित की जा सकती है. देखते हैं, क्या होता है. ईवीएम मशीन से छेड़छाड़ को लेकर भी चर्चा हो रही है. जो भी चुनाव हारता है, ऐसी चर्चा पर भरोसा कर लेता है. लेकिन एक बात है कि बैलेट बॉक्स की तरफ जाया जा सकता है, जिसमें सबका भरोसा होता है. अतिआधुनिक होने से हमेशा मदद नहीं मिलती, यदि पयाप्त चेक एंड बैलेंसेज (निगरानी) न हो. जैसा कि सुब्रमण्यम स्वामी ने सुझाव भी दिया है कि ईवीएम बटन दबाते ही एक पुर्जा निकले और उसे बॉक्स में जमा कर दिया जाए. विवादित मुद्दे की हमेशा जांच की जानी चाहिए. लेकिन निश्चित तौर पर मौजूदा व्यवस्था में बदलाव किए जाने की जरूरत है. ■

feedback@chauthiduniya.com

भारत-पाक के बीच नई शुरुआत

शुजात बुखारी

पांच राज्यों के चुनाव परिणाम न सिर्फ सत्ताधारी भारतीय जनता पार्टी (बीजेपी) के भविष्य की संभावनाओं को तय करेंगे बल्कि स्वयं प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के लिए भी इन्हें महत्वपूर्ण माना जा रहा है. इन चुनाव परिणामों का देश की आंतरिक और विदेशी मामलों की राजनीति पर भी असर पड़ेगा. परिणाम घोषित होने से पहले, भारत और पाकिस्तान के तनावपूर्ण संबंधों में कुछ सकारात्मक बदलाव देखने को मिले. पिछले एक साल के दौरान नई दिल्ली और इस्लामाबाद न केवल इस क्षेत्र में एक दूसरे के आमने-सामने रहे, बल्कि अपनी लड़ाई को ये संयुक्त राष्ट्र में भी ले गए. 17 सितंबर को उड़ी में सेना के बेस पर हुए हमले को उजागर करके भारत ने पाकिस्तान को अलग थलग करने की कोशिश की, वहीं पाकिस्तान ने 2016 की गर्मियों में कश्मीर में भयंकर अशांति के दौरान मानवाधिकारों के उल्लंघन को मुद्दा बनाया. नतीजतन, हालात में सुधार नहीं हुए और शब्दों का युद्ध निरंतर जारी रहा.

बहरहाल, दोनों देशों के बीच निकट भविष्य में संवाद प्रक्रिया की बहाली से संबंधित (अनौपचारिक रूप से ही सही) संकेत दिए गए हैं. पाकिस्तान के राजनयिक अमजद सियाल की सार्क के नए महासचिव के तौर पर नियुक्ति का नई दिल्ली द्वारा विरोध नहीं करना, इस दिशा में एक संकेत माना जा रहा है. इससे पहले भारत ने उनकी नियुक्ति पर विरोध जताया था. 20 मार्च को लाहौर में सिंधु जल संधि पर द्विपक्षीय वार्ता आयोजित करने का समझौता भी बहुत महत्वपूर्ण है. यह न केवल इस मायने में महत्वपूर्ण है कि दोनों देश इस विषय पर वार्ता शुरू करने के लिए सहमत हो गए हैं, बल्कि इस मायने में भी कि नई दिल्ली ने सिंधु जल के मुद्दे को किसी तीसरे पक्ष के हस्तक्षेप की बजाय द्विपक्षीय रूप से हल करने की इच्छा जताई है. हालांकि नई दिल्ली ने यह भी साफ़ किया है कि इसे इस्लामाबाद के साथ वार्ता प्रक्रिया की बहाली के रूप में न देखा जाए. यह भी समझने योग्य है कि पिछले दो सालों के दौरान जब विभिन्न राज्यों के चुनाव हो रहे थे, ऐसे में भाजपा सरकार ने यह कहते हुए पाकिस्तान के खिलाफ सख्त रुख अख्तियार कर रखा है कि बातचीत और आतंकवाद एक साथ नहीं चल सकते हैं. नई दिल्ली की यह निरंतर मांग रही है कि 2008 के मुंबई हमलों में शामिल लोगों पर कानूनी कार्रवाई हो और इस्लामाबाद भारत में आतंक को शह देना बंद करे.

कुल मिला कर पिछले दो सालों में भारत और पाकिस्तान के बीच शत्रुता बढ़ी है और दोनों पक्षों ने महत्वपूर्ण मुद्दों पर सख्त रुख बनाए रखा है. 25 दिसंबर 2015 को प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के अचानक हुए लाहौर दौरे ने दोनों देशों के बीच संबंधों में एक नई खिड़की खोल दी

> **भारत पर भी कश्मीर समस्या सुलझाने के लिए कुछ करने का दबाव है. औपचारिक प्रतिष्ठान के अलावा मोदी सरकार को सलाह देने वालों का मानना है कि इस मामले में एक राजनीतिक दृष्टिकोण भी होनी चाहिए. कश्मीर में स्थिरता बहाल करने के लिए मुख्यमंत्री महबूबा मुफ्ती ने भी हालिया दिनों में इस्लामाबाद के साथ संपर्क के चैनल खोलने पर जोर दिया है. उन्होंने यहां तक कहा कि चीन-पाकिस्तान आर्थिक कॉरिडोर (सीपीईसी) की महत्वाकांक्षी योजना से जम्मू और कश्मीर को (इस क्षेत्र की निकटता के कारण) फायदा उठाना चाहिए. लेकिन दिल्ली में जो लोग सामरिक मामलों को देखते हैं, वे सीपीईसी की वजह से पैदा होने वाली स्थिति के बारे में चिंतित हैं कि कैसे यह इस क्षेत्र में भारत को अप्रासंगिक बना सकता है.**

थी और उनके पाकिस्तानी समकक्ष नवाज शरीफ के साथ अनौपचारिक वार्ता के बाद बहुत उम्मीदें की जा रही थीं. परन्तु यह शुरुआत अल्पकालिक ही रही, क्योंकि पठानकोट एयरबेस पर मिलिटेंटो ने हमला कर दिया था. यह भी तथ्य है कि नई दिल्ली ने धैर्य से काम लिया. यहां तक कि पाकिस्तान की एक उच्च स्तरीय जांच टीम को पठानकोट आने की अनुमति दी. लेकिन दुर्भाग्यवश इस्लामाबाद ने इस पहल का उचित जवाब नहीं दिया, जिसने स्पष्ट रूप से दोनों देशों के संबंधों में पूर्णविराम लगा दिया था. पिछली बार 2014 में भारत द्वारा विदेश सचिव स्तर की वार्ता को एकतरफा तौर पर रद्द कर दिए जाने से इस प्रक्रिया में मुश्किल आ गई थी. इन संबंधों को वास्तविक झटका उस समय लगा था, जब अगस्त 2015 में पाकिस्तानी उच्चायुक्त अब्दुल बासित द्वारा हुर्रियत कांफ्रेंस के नेताओं को बातचीत के लिए आमंत्रित किए जाने से दिल्ली में होने वाली दोनों देशों के राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकारों की बैठक स्थगित हो गई थी. भाजपा सरकार ने इसे एक मुद्दा बना दिया कि किसी भी उच्च स्तरीय वार्ता से पहले हुर्रियत नेताओं को आमंत्रित नहीं किया जाना चाहिए. हालांकि पिछले 15 वर्षों से ऐसा ही होता आया है.

आज जो हो रहा है वो एकतरफा नहीं है, क्योंकि नई दिल्ली और इस्लामाबाद दोनों इस दिशा में कदम उठा रहे हैं. इससे ज़ाहिर होता है कि दोनों देशों के बीच कुछ चल रहा है. नई दिल्ली को इस मायने में शर्मिंदगी उठानी पड़ी, क्योंकि सितंबर में उड़ी हमले के बाद पाकिस्तान को दोषी ठहराने के लिए गिरफ्तार किए गए दो युवकों को राष्ट्रीय जांच एजेंसी (एनआईए) की जांच में निर्दोष पाया गया और उन्हें वापस उनके देश भेज दिया गया. मछुआरों के आदान-प्रदान, डायरेक्टर जनरल ऑफ मिलिट्री ऑपरेशंस के बीच संपर्क और सीमा के दोनों तरफ अपेक्षाकृत शांत बॉर्डर कुछ इशारा करते हैं. सीमाओं पर संयम के सकारात्मक कदम के साथ-साथ इस्लामाबाद ने एक क़दम आगे बढ़ते हुए जमात-उद-दावा प्रमुख हाफिज सईद पर प्रतिबंध लगाया और उसके खातों को फ्रीज़ किया.

राजनीतिक चर्चा यह भी है कि नए विदेश सचिव के रूप में तहमीना जंजुआ की नियुक्ति और अब्दुल बासित, जिनकी छवी भारत में अच्छी नहीं है, उन्हें साइड लाइन किया जाना दोनों देशों के बीच हालात बेहतर बनाने की दिशा में अच्छा क़दम है. पाकिस्तान के नए सेना प्रमुख जनरल कमर बाजवा ने भी यह स्पष्ट किया है कि वे राजनीति से दूरी बनाए रखना चाहते हैं. भारत से संबंध सुधारने के मामले में पाकिस्तानी सेना द्वारा हस्तक्षेप नहीं करना अब हकीकत बनता है या नहीं, ये देखने वाली बात होगी, लेकिन अब दृष्टिकोण में बदलाव दिखाई दे रहा है. पाकिस्तान उधर अफगानिस्तान सीमा पर चरमपंथियों से निपटने में व्यस्त है. इसलिए भारत के साथ दूसरा मोर्चा खोलना एक ऐसी चुनौती है, जिसे वो स्वीकार नहीं करेगा. नवाज शरीफ़ सरकार ने पिछले एक महीने में कश्मीर की अपनी सक्रिय नीति को धीमा कर दिया है.

भारत पर भी कश्मीर मसला सुलझाने के लिए कुछ करने का दबाव है. औपचारिक प्रतिष्ठान के अलावा मोदी सरकार को सलाह देने वालों का मानना है कि इस मामले में एक राजनीतिक दृष्टिकोण भी होनी चाहिए. कश्मीर में स्थिरता बहाल करने के लिए मुख्यमंत्री महबूबा मुफ्ती ने भी हालिया दिनों में इस्लामाबाद के साथ संपर्क के चैनल खोलने पर जोर दिया है. उन्होंने यहां तक कहा कि चीन-पाकिस्तान आर्थिक कॉरिडोर (सीपीईसी) की महत्वाकांक्षी योजना से जम्मू और कश्मीर को (इस क्षेत्र की निकटता के कारण) फायदा उठाना चाहिए. लेकिन दिल्ली में जो लोग सामरिक मामलों को देखते हैं, वे सीपीईसी की वजह से पैदा होने वाली स्थिति के बारे में चिंतित हैं कि कैसे यह इस क्षेत्र में भारत को अप्रासंगिक बना सकता है. जल विवाद और बलूचिस्तान पर मोदी सरकार का नरम रुख, पाकिस्तान से निपटने की निति में कुछ बदलाव का संकेत दे रहा है.

इन घटनाक्रम को ध्यान में रखते हुए एक वर्ग यह मानता है कि पाकिस्तान से बातचीत करने का कोई अन्य विकल्प नहीं है. लेकिन जो भी परिवर्तन हो रहा है, उसमें वाशिंगटन की सक्रिय भागीदारी है. वाशिंगटन दोनों परमाणु हथियार संपन्न पड़ोसी देशों के बीच शांति स्थापना में अपनी भूमिका निभाना चाहता है. अगर जानकार सूत्रों की मानें, तो इस्लामाबाद ने हाफिज सईद के खिलाफ कार्रवाई करके अमेरिकियों को खुश करने की कोशिश की है और साथ ही उन्हें आगाह भी किया है कि भारत के द्वारा इस पर कोई सकारात्मक जवाब नहीं दिया जा रहा है. जो लोग दोनों देशों के बीच के शत्रुतापूर्ण माहौल से चिंतित हैं, वे जून में कजाकिस्तान में नरेंद्र मोदी और नवाज शरीफ के बीच होने वाली संभावित बैठक पर काम कर रहे हैं, जहां ये दोनों नेता संघाई सहयोग संगठन (एससीओ) की बैठक में भाग लेने वाले हैं. बहरहाल, चुनाव परिणाम आ चुके हैं और इसी से यह निर्धारित होगा कि 2019 के चुनावों में अपनी स्थिति मज़बूत करने के लिए भाजपा किस तरह से आगे बढ़ेगी. वैसे, दोनों देशों के रिश्तों में एक नए परिवर्तन की उम्मीद तो की ही जा सकती है. ■

-लेखक राइजिंग कश्मीर के संपादक हैं.

feedback@chauthiduniya.com

संतोष भारतीय

जब तोप मुक़ाबिल हो

सशक्त विपक्ष बनाने की ज़िम्मेदारी ग़ैर भाजपा दलों की है

पांच राज्यों के चुनाव समाप्त हो गए. इन चुनावों ने सभी को सीख दी, लेकिन कौन सीखेगा ये पता नहीं. चुनाव की पहली सीख अखिलेश यादव के लिए है कि आप जो करते हैं लोग उसे देखते हैं. जो अपने को समाज बदलने का प्रबल दावेदार कहते हैं, खासकर उनके काम बहुत देखे जाते हैं. अखिलेश यादव तो उत्तर प्रदेश की पूरी राजनीति बदलना चाह रहे थे. 22 से लेकर 35 साल तक के नौजवानों से विधानसभा को भर देना चाहते थे. उन्हें लगता था कि उत्तर प्रदेश के सभी लोग उनका खुले दिल से स्वागत करेंगे. वे स्वागत करते, अगर अखिलेश यादव के साथ संघर्ष नाम का शब्द जुड़ा होता, उनके पास बदले समाज की तस्वीर कैसी है, इसके बारे में लोगों को पता चल जाता. लोग अखिलेश यादव का साथ देते, अगर उन्हें लगता कि यह विनम्रता नकली नहीं है. पिता मुलायम सिंह यादव और चाचा शिवपाल यादव के साथ किया गया उनका व्यवहार लोगों के दिलों पर यह छाप छोड़ गया कि सारी विनम्रता और सारे वादे नक़ली हैं. अखिलेश यादव द्वारा ज़मीनी सच्चाई को न समझना और बिहार मॉडल का सिर्फ़ दस प्रतिशत पालन करना, उनके लिए सबसे बड़ा ख़तरा बन गया. अब लगता है कि उत्तर प्रदेश में अगले पांच साल मुलायम सिंह यादव के लिए संघर्ष करने का ही काम है. 40 साल तक संघर्ष कर मुलायम सिंह यादव ने पार्टी बनाई और 40 साल के बाद फिर उनके ऊपर संघर्ष करने का ज़िम्मा आ गया है.

उत्तर प्रदेश चुनाव की सीख मायावती के लिए भी है, जिन्होंने मान रखा था कि वोटर उनकी जेब में हैं और वो जैसा कहेंगी, दलित मतदाता वैसा ही करेगा. जिस तरह से वोट पड़े हैं, उससे लगता है कि दलितों का भी एक वर्ग छिटक कर भारतीय जनता पार्टी के साथ चला गया. मुसलमान बुरी तरह से बंट गए. यह अलग बात है कि मायावती ये दावा करें कि ईवीएम मशीन की वजह से वे हारी हैं. अगर यह सच्चाई है तो मायावती को आन्दोलन करना चाहिए और सड़क पर आन्दोलन कर सरकार को ललकारना चाहिए. चूंकि मायावती ने कभी आन्दोलन नहीं किया है और न अखिलेश यादव ने आन्दोलन किया है, इसलिए यह मानना कि ये किसी प्रकार का संघर्ष सड़क पर करेंगे, सही नहीं लगता. राहुल गांधी का संघर्ष सिर्फ और सिर्फ संसद भवन के बाहर तक सीमित है. उन्हें अभी अपने बारे में बनाई गई छवि को तोड़ने की जद्दोजहद करनी पड़ेगी, अन्यथा लोग उन्हें गंभीरता से नहीं लेंगे. उन्हें गंभीरता से वही लेगा, जो उनकी पार्टी में है और जिसे पार्टी में रहना है.

उत्तर प्रदेश के ज्यादातर गैर मुस्लिम मतदाताओं के बीच यह प्रचार हुआ कि मुसलमान बड़ी संख्या में आबादी बढ़ा रहे हैं. अगर हिंदू एक न हुए तो मुसलमानों का वर्चस्व भारतीय राजनीति में हो जाएगा. इस प्रचार ने उन तबक़ों को अपने प्रभाव में ले लिया, जो तबके मायावती और मुलायम सिंह यादव के विचार के बताए जाते हैं. अति पिछड़ों का भारतीय जनता पार्टी में जाना, मुसलमानों का बंटना और गांव में होने वाला प्रचार, इन्होंने बिना मेहनत के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के अभियान को सफल बना दिया. अगर प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी को पूरा भरोसा होता कि इतना बड़ा बहुमत आ रहा है, तो वो तीन दिन बनारस में नहीं लगाते, पूरी कैबिनेट बनारस में नहीं रहती, अमित शाह एक महीने तक बनारस में नहीं रहते और प्रधानमंत्री को अपने भाषण में यह संकेत नहीं देना पड़ता कि उत्तर प्रदेश में त्रिशंकु विधानसभा नहीं होनी चाहिए. उनकी पार्टी को बहुमत मिलना चाहिए. इतने बड़े बहुमत की कल्पना खुद प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी या भारतीय जनता पार्टी ने नहीं की थी.

कांग्रेस को ज़िंदा रखना प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की रणनीति का एक हिस्सा है. कांग्रेस का नेतृत्व आज इतना कमज़ोर और दिशाहीन है, तर्कों से दूर है, मुद्दा विहीन है कि कांग्रेस को प्रमुख विरोधी के रूप में धराशाई करना नरेन्द्र मोदी के लिए बड़ी आसान चीज़ है. यह वही रणनीति है, जो कभी इंदिरा जी अपनाती थीं. वो अपना एक दुश्मन खड़ा करती थीं फिर उस दुश्मन को समाप्त करती थीं और चुनाव जीत जाती थीं. देश पर इसी तरह उन्होंने इतने लंबे समय तक राज किया.

विपक्षी दल इससे कितनी सीख लेंगे, पता नहीं. जब कभी विपक्षी एकता की बात होती है तो सबसे पहला सवाल उठता है कि प्रधानमंत्री कौन होगा? इस पर एकमत हो जाएं तो एकता की बात हो. यह भावना उभर कर सामने आने लगती है कि ममता बनर्जी प्रधानमंत्री हैं, अखिलेश यादव प्रधानमंत्री हैं, मायावती प्रधानमंत्री हैं, लालू यादव प्रधानमंत्री हैं और नीतीश कुमार भी प्रधानमंत्री हैं. दूर बैठे नवीन पटनायक और चन्द्रा बाबू नायडू के दिमाग में भी प्रधानमंत्री पद पाने की लालसा काफी प्रबल है. विरोधी दलों का सवाल है कि पहले हमें प्रधानमंत्री मानो, तब हम विपक्षी एकता की बात करेंगे. इतने प्रधानमंत्री और इतने दल एक नई वास्तविक स्थिति की रचना करते हैं. वो यह कि भारतीय जनता पार्टी या प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी इन सबके मुक़ाबले बहुत बड़े क़द के हैं. वे 24 घंटे के राजनीतिज्ञ हैं. वे चाहे देश में हों या विदेश में, घूमते रहते हैं और अपनी कमज़ोरियों को अपनी ताक़त में बदलना जानते हैं. विपक्षी नेताओं में किसी में इतना साहस नहीं है कि प्रधानमंत्री की कमियों को लेकर जनता को लामबंद करें, जबकि प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी विपक्ष की कमियों या विपक्षी नेताओं की कमज़ोरियों को अपने भाषण में एक सशक्त मुद्दा बनाते हैं और विपक्ष को एक कोने में खड़े कर देते हैं. दरअसल विपक्ष प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की नीतियों का जवाब दे रहा है, उनके मुद्दों का जवाब दे रहा है और उनके अखाड़े में जाकर लड़ रहा है, जबकि अगर विपक्ष को प्रधानमंत्री मोदी से लोहा लेना है तो उन्हें अपने अखाड़े में लाना पड़ेगा. यहां मुझे डॉक्टर राममनोहर लोहिया या विश्वनाथ प्रताप सिंह याद आते हैं. वीपी सिंह खुद मुद्दे तय करते थे और सरकार उनके मुद्दों का उत्तर देती थी. यह अटल बिहारी वाजपेयी, मनमोहन सिंह और नरसिम्हा राव के समय हुआ और उससे पहले राजीव गांधी के समय भी हुआ. जब तक वीपी सिंह

> जिन दिनों इंदिरा गांधी या राजीव गांधी की सत्ता थी, उन दिनों सभी विपक्षी दल एकता की बात करते थे. रणनीतिक और वास्तविक एकता की बात करते थे और उस बातचीत में भारतीय जनता पार्टी भी शामिल होती थी. उन दिनों इस पार्टी का नाम जनसंघ था. डॉक्टर लोहिया के समय यह बातचीत में शामिल होती थी और बाद में जब इसका रूपांतरण, 1978 के बाद, भारतीय जनता पार्टी में हुआ, तब भी यह शामिल हुई. अब भारतीय जनता पार्टी, कांग्रेस का स्थान ले रही है और सारे देश में एक ऐसी पार्टी के रूप में विकसित हो रही है, जो विपक्ष का खात्मा करने का सिद्धांत बनाए हुए है. इस रणनीति पर वो धीरे-धीरे सफल भी हो रही है. ऐसे समय में अगर भारतीय जनता पार्टी के खिलाफ सभी दलों को एक होने की चुनौती स्वीकार्य नहीं होगी तो यह मानना चाहिए कि कुछ भी नहीं हो पाएगा. एक-एक लकड़ी टूटती जाएगी और बचपन में पढ़ी हुई एक व्यक्ति और उसके सात बच्चों की कहानी सही होती चली जाएगी.

जीवित थे, 1987 के बाद का वक्त अगर याद करें, तो पूरी राजनीति उनके द्वारा उठाए गए मुद्दों के इर्द-गिर्द ही चलती थी, कहीं दाएं-बाएं भाग ही नहीं पाती थी. यह दुर्भाग्य की बात है कि आज विपक्षी दलों में कोई ऐसा नेता नहीं है, जो अपने मुद्दों के आधार पर सरकार को जवाब देने के लिए विवश कर सके.

अप्रैल से विपक्षी दलों के बीच कुछ न कुछ बातचीत शुरू होगी, लेकिन इनमें कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है जो सभी लोगों को एक सूत्र में पिरो सके. उनको इस बात के लिए तैयार कर सके कि प्रधानमंत्री पद एकता की राह में रोड़ा नहीं बनना चाहिए. सब कहेंगे कि हमारे लिए प्रधानमंत्री पद का कोई महत्व नहीं है, लेकिन सबके लिए प्रधानमंत्री पद का महत्व है और सब अपनी कमज़ोर ताक़त के सहारे प्रधानमंत्री बनने का सपना पाले हुए हैं. अगर सभी विपक्षी दल एक फेडरल पार्टी बनाते हैं और हर राज्य में लोकसभा की हर सीट पर अगर एक उम्मीदवार उतारने का फैसला करते हैं, तभी वो नरेन्द्र मोदी का मुक़ाबला कर पाएंगे.

जिन दिनों इंदिरा गांधी या राजीव गांधी की सत्ता थी, उन दिनों सभी विपक्षी दल एकता की बात करते थे. रणनीतिक और वास्तविक एकता की बात करते थे और उस बातचीत में भारतीय जनता पार्टी भी शामिल होती थी. उन दिनों इस पार्टी का नाम जनसंघ था. डॉक्टर लोहिया के समय यह बातचीत में शामिल होती थी और बाद में जब इसका रूपांतरण, 1978 के बाद, भारतीय जनता पार्टी में हुआ, तब भी यह शामिल हुई. अब भारतीय जनता पार्टी, कांग्रेस का स्थान ले रही है और सारे देश में एक ऐसी पार्टी के रूप में विकसित हो रही है, जो विपक्ष का खात्मा करने का सिद्धांत बनाए हुए है. इस रणनीति पर वो धीरे-धीरे सफल भी हो रही है. ऐसे समय में अगर भारतीय जनता पार्टी के खिलाफ सभी दलों को एक होने की चुनौती स्वीकार्य नहीं होगी तो यह मानना चाहिए कि कुछ भी नहीं हो पाएगा. एक-एक लकड़ी टूटती जाएगी और बचपन में पढ़ी हुई एक व्यक्ति और उसके सात बच्चों की कहानी सही होती चली जाएगी. जिसने अपने बच्चों से कहा था कि एक लकड़ी को तोड़ो तो तुम सब तोड़ सकते हो, लेकिन सात लकड़ियों का गट्ठर बनाओ तो कोई नहीं तोड़ पाएगा. हम सीख कहां लेते हैं? हमारा यह मानना है कि स्वस्थ लोकतंत्र के लिए सशक्त विपक्ष आवश्यक है. अगर सशक्त विपक्ष नहीं बनता है, समझदार विपक्ष नहीं बनता है तो सरकारें बेलगाम हो जाती हैं. कालांतर में इसके बहुत से उदाहरण हैं. जनता विपक्ष से इतनी हताश है कि वो उनके साथ खड़े होने में संकोच अनुभव करती है. उसे आशा ही नहीं है कि विपक्ष उनकी किसी समस्या का समाधान करेगा. शायद यही कारण है कि इस बार लोगों ने उत्तर प्रदेश में ऐसा बहुमत भारतीय जनता पार्टी को दिया कि वो इतिहास में पहले कभी नहीं मिला था. प्रधानमंत्री मोदी को हटाने के लिए नहीं, लेकिन एक सशक्त विपक्ष बनाने की ज़िम्मेदारी गैर भारतीय जनता पार्टी दलों की है. क्या वो दल अपनी इस ऐतिहासिक जिम्मेदारी को निभाएंगे, अभी इसमें संशय दिखाई देता है. ■

editor@chauthiduniya.com

आर या पार

निजी कंपनियों का फ़ायदा

बैलेंस शीट की दोहरी समस्या के समाधान के लिए आर्थिक समीक्षा में जो उपाय सुझाए गए हैं, वे बैंड-एड मात्र हैं.

बर्नार्ड डिमेलो

बैलेंस शीट की दोहरी समस्या का मतलब यह है कि कंपनियों को जरूरत से ज्यादा कर्ज दिया गया है और बैंकों का बहुत सारा कर्ज बुरे कर्ज में तब्दील हो गया है. बैंक अपने इन कर्जों का सही प्रबंधन नहीं कर पा रहे हैं. इस वजह से उनकी गैर निष्पादित संपत्ति यानी एनपीए बढ़ती जा रही है. आर्थिक समीक्षा 2015-16 के लेखकों ने इसके समाधान के लिए एक केंद्रीकृत सार्वजनिक क्षेत्र संपत्ति पुनर्वास एजेंसी यानी पीएआरए के गठन का सुझाव दिया है. इनके मुताबिक यह एजेंसी बड़े और मुश्किल मामलों को अपने हाथों में ले और कर्ज कम करने के लिए राजनीतिक तौर पर मुश्किल माने जाने वाले निर्णय ले.

सरकारी बैंकों के कुल कर्जों का छठा भाग मुश्किल में है. इसमें एनपीए भी शामिल है. आर्थिक समीक्षा में उन कंपनियों पर ध्यान केंद्रित किया गया है, जिन्होंने बड़े कर्ज लेकर बुनियादी ढांचा क्षेत्र में बड़ी परियोजनाएं विकसित की हैं. इन कंपनियों का ब्याज और मुनाफे का अनुपात एक से कम है. इसका मतलब यह हुआ कि ये कंपनियां इतना भी नहीं कमा रही हैं कि अपना ब्याज तक चुका सकें. इन कंपनियों ने जो विदेशी कर्ज यानी ईसीबी जुटाए हैं, उन पर दिया जाने वाला ब्याज रुपए के कमजोर होने से बढ़ गया है. भारतीय रिजर्व बैंक भी अपनी मौद्रिक नीतियां महंगाई को ध्यान में रखकर बना रहा है. इससे भी ब्याज का बोझ बढ़ा है.

रिजर्व बैंक ने कॉरपोरेट कर्जों को पुनर्गठित करने की जो योजना बनाई है, उसमें कर्ज देने वाले को अधिक अहमियत दी गई है. उन्हें कर्ज चुकाने की अवधि बढ़ाने, ब्याज दर कम करने, कर्ज को शेयर में बदलने और अतिरिक्त कर्ज देने जैसी सुविधा दी गई है.

> विभिन्न सरकारों ने इस समस्या को लगातार बढ़ने दिया, लेकिन मौजूदा सरकार को इसके समाधान के लिए कुछ न कुछ करना पड़ेगा. क्या पीएआरए इसका समाधान है? योजना यह है कि यह प्रस्तावित एजेंसी बड़े कर्जों को बैंकों से अपने हाथ में लेकर या तो कर्ज को हिस्सेदारी में बदले या फिर हिस्सेदारी बेचे या अन्य कोई उपाय करे. अगर ऐसे कर्ज बैंकों के बही-खाते से हट जाते हैं तो उनकी आर्थिक सेहत सुधरी हुई लग सकती है. प्रस्तावित एजेंसी को तीन स्रोतों से फाइनेंस किया जाएगा. ये हैं: सरकारी प्रतिभूति जारी करना, निजी कंपनियों को शेयर खरीदने के लिए प्रोत्साहित करना और रिजर्व बैंक.

इसके बावजूद स्थिति नहीं सुधर रही है. आर्थिक समीक्षा में नैतिकता की दुहाई देते हुए कहा गया है कि कर्ज पुनर्गठन से सरकारी बैंकों की कीमत पर निजी निवेशकों को फायदा मिल रहा है.

उदारीकरण का एक बड़ा लक्ष्य यह भी था कि निजी कंपनियां बुनियादी ढांचा क्षेत्र में निवेश करें. जब यह योजना कामयाब नहीं हो पाई तो सरकार ने सार्वजनिक निजी भागीदारी की अवधारणा पर काम करना शुरू किया. इसके तहत सरकारी कंपनियों पर विभिन्न परियोजनाओं के लिए बड़े कर्ज देने के लिए दबाव बनाया गया. ये परियोजनाएं ऐसी हैं, जिनमें काफी वक्त लगता है और लंबे समय बाद मुनाफा आता है. निजी बैंक ऐसी परियोजनाओं को कर्ज देने के लिए तैयार नहीं थे.

विभिन्न सरकारों ने इस समस्या को लगातार बढ़ने दिया, लेकिन मौजूदा सरकार को इसके समाधान के लिए कुछ न कुछ करना पड़ेगा. क्या पीएआरए इसका समाधान है? योजना यह है कि यह प्रस्तावित एजेंसी बड़े कर्जों को बैंकों से अपने हाथ में लेकर या तो कर्ज को हिस्सेदारी में बदले या फिर हिस्सेदारी बेचे या अन्य कोई उपाय करे. अगर ऐसे कर्ज बैंकों के बही-खाते से हट जाते हैं तो उनकी आर्थिक सेहत सुधरी हुई लग सकती है. प्रस्तावित एजेंसी को तीन स्रोतों से फाइनेंस किया जाएगा. ये हैं: सरकारी प्रतिभूति जारी करना, निजी कंपनियों को शेयर खरीदने के लिए प्रोत्साहित करना और रिजर्व बैंक.

इस एजेंसी की अवधारणा 1990 के दशक में पूर्वी एशिया में आए संकट से निपटने के तरीकों से आई है. प्रस्तावित एजेंसी जिन कंपनियों की हिस्सेदारी उनके कर्जों को बैंकों से लेकर बेचेगी, उसे भी निजी कंपनियां ही खरीदेंगी. उन्हें भी इस बात का यकीन रहेगा कि जनता से जुड़ी परियोजनाएं विकसित करने में लगी कंपनी अगर नाकाम होती है तो फिर से यह एजेंसी उनकी मदद करेगी. ऐसे में वे फिर से ठीक से काम करने पर ध्यान नहीं दे सकते हैं और यह कुचक्र चलता रह सकता है.

बुनियादी समस्या यह है कि इस पूरी प्रक्रिया में निजी मुनाफा ही लक्ष्य होगा. भारी विदेशी मुद्रा भंडार होने और बैंकों द्वारा रिजर्व बैंक से तरलता लेने की वजह से पैसे की आपूर्ति में कोई समस्या नहीं होगी. यहां तक की गैर वित्तीय कंपनियां भी अब पैसा लगाने को तैयार दिख रही हैं. उनका एकमात्र लक्ष्य अधिक से अधिक मुनाफा कमाना है. बैलेंस शीट की दोहरी समस्या के मूल में यही अधिक से अधिक मुनाफा कमाने की प्रवृत्ति है. ऐसे में इस समस्या का पूरी तरह से समाधान करने के बजाय प्रस्तावित एजेंसी बैंड-एड का ही काम करेगी. ■

लेखक इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली के हिन्दी एडीटर हैं.

feedback@chauthiduniya.com

ज़ुबानी जंग जारी, अभी जदयू भारी

यूपी और उत्तराखंड में जीत के बाद यह बिहार की सियासत पर पड़ने वाला तात्कालिक प्रभाव था, जो तीखी बयानबाजियों के रूप में सामने आया. अब सवाल यह है कि यूपी उत्तराखंड की जीत के दूरगामी प्रभाव क्या होंगे? सरसरी तौर पर देखें तो यूपी की जीत ने भाजपा में एक नया जोश भर दिया है, जिसे वह आने वाले दिनों तक बनाए रखना चाहेगी. यकीनन इस जीत से भाजपा का मनोबल बढ़ा है, वहीं राजद कांग्रेस गठबंधन को कुछ महत्वपूर्ण सबक भी मिले हैं. भाजपा खेमे से अलग होने के बाद नीतीश कुमार की राजनीति समाजवादी-धर्मनिरपेक्ष राजनीति के रास्ते पर ही आगे बढ़ी है. ऐसे में लालू-नीतीश के लिए यह जरूरी है कि वे गठबंधन के बिहार मॉडल का विस्तार करें.

इर्शादुल हक

उत्तर प्रदेश में भाजपा की ऐतिहासिक जीत के बाद बिहार की राजनीति में उबाल आ गया. अचानक बयानबाजियों का सिलसिला चल निकला. शुरुआत राजद के वरिष्ठ नेता रघुवंश प्रसाद ने की. उन्होंने नीतीश कुमार पर हल्ला बोलते हुए कह डाला कि नोटबंदी का समर्थन और यूपी चुनाव पर नीतीश की चुप्पी से वहां गठबंधन को नुकसान पहुंचा. रघुवंश का इतना कहना था कि जैसे बिहार में राजनीतिक उबाल सा आ गया. ऐसा लगने लगा कि यूपी और उत्तराखंड में भाजपा की जीत के बाद बिहार ही अखाड़ा बन गया है. रघुवंश के इस बयान पर जद यू के दो प्रवक्ताओं- नीरज कुमार और संजय सिंह ने कोहराम मचा दिया. नीरज ने सीधे लालू प्रसाद से सवाल कर दिया कि क्या वह दोबारा बिहार में जंगलराज लाना चाहते हैं? उन्होंने कहा कि जदयू इसकी कभी इजाजत नहीं देगा. इससे पहले कि इन बयानबाजियों पर राजद की तरफ से कोई टिप्पणी आती, नीरज के बयान पर राजद के वरिष्ठ नेता रघुवंश प्रसाद ने कहा कि उनके नेता लालू प्रसाद का इशारा हो तो वे ऐसे लोगों (नीरज की तरफ इशारा) का गर्दा झाड़ देंगे. मामला बिगड़ता देख राजद की नेता राबड़ी देवी ने रघुवंश प्रसाद के बयान को फूहड़ बताया. इसके बाद उपमुख्यमंत्री तेजस्वी यादव ने भी कहा कि अगर रघुवंश प्रसाद ऐसे बयान देते रहेंगे तो वे राजद अध्यक्ष लालू प्रसाद से उनके खिलाफ कार्रवाई करने की मांग करेंगे.

रघुवंश की तरफ से गठबंधन के खिलाफ बयानबाजी की यह कोई पहली मिसाल नहीं थी. सवा साल की नई सरकार के गठन के बाद रघुवंश ने कम से कम आधा दर्जन बार सीधे मुख्यमंत्री नीतीश कुमार को निशाने पर लिया है, लेकिन यह पहला अवसर है जब बयानों में इस तरह की तल्खी आई है. इतना ही नहीं, यह पहला मौका है जब राबड़ी देवी जैसी वरिष्ठ नेता ने रघुवंश के बयान को फूहड़ बताया तो उपमुख्यमंत्री ने उनके खिलाफ कार्रवाई करने की मांग की. रघुवंश से शुरू होने वाले तमाम विवादित बयानों में एक बात आम तौर पर देखी जाती है कि लालू प्रसाद ऐसे मौकों पर ज्यादातर चुप ही रहते हैं. मामला तूल पकड़ने पर ही वे कूदते हैं और जख्म पर मरहम लगा कर शांति बनाने की कोशिश करते हैं. इन बयानबाजियों का तात्कालिक असर यह होता है कि विपक्षी दल भाजपा गठबंधन की इस कमजोरी का लाभ उठाते हुए उस पर हमलावर हो जाती है.

गठबंधन सरकार के अंदर अन्य विवादों और यूपी चुनाव नतीजों से उत्पन्न हालात के बाद के विवादों में फर्क है. गठबंधन सरकार और खास कर लालू खेमा भाजपा की जीत के बाद कुछ ज्यादा ही आहत है. राबड़ी देवी और तेजस्वी यादव का रघुवंश के खिलाफ कड़ा बयान एक तरह से इशारा है कि वे राजद-जद यू गठबंधन को और नुकसान नहीं होने देना चाहते हैं. हालांकि कुछ टिप्पणीकार रघुवंश के पूर्व बयानों को जद यू पर अपने दबाव बनाए रखने की रणनीति के रूप में देखते रहे हैं. लेकिन यूपी के परिणाम ने राजद को यह एहसास दिलाया है कि अब सहयोगी जद यू से उलझने के बजाय एक होने की जरूरत है.

लालू प्रसाद ने यूपी के कई विधानसभा क्षेत्रों में चुनाव प्रचार किया और बार-बार जीत का दावा किया था. वहां के परिणाम पर लालू का चिंतित होना स्वाभाविक है. उन्होंने तो यहां तक कह डाला था कि 11 मार्च के बाद यानी रिजल्ट आने पर साम्प्रदायिक शक्तियों का होलिका दहन करेंगे. रिजल्ट अपने पक्ष में नहीं आने पर होली के दिन लालू प्रसाद के आवास पर सन्नाटा पसरा रहा. वहीं भाजपा के लोगों ने राजधानी पटना में जश्न मनाया और राजद खेमे में पसरे सन्नाटे पर कटाक्ष भी किया. भाजपाइयों का यह कटाक्ष एक तरह से बिहार में उनकी हार की प्रतिक्रिया के रूप में माना गया, जिसे वे यूपी में अपनी जीत के जरिए व्यक्त करना चाहते थे.

यूपी और उत्तराखंड में जीत के बाद यह बिहार की सियासत पर पड़ने वाला तात्कालिक प्रभाव था, जो तीखी बयानबाजियों के रूप में सामने आया. अब सवाल यह है कि यूपी उत्तराखंड की जीत के दूरगामी प्रभाव क्या होंगे? सरसरी तौर पर देखें तो यूपी की जीत ने भाजपा में एक नया जोश भर दिया है, जिसे वह आने वाले दिनों तक बनाए रखना चाहेगी. यकीनन इस जीत से भाजपा का मनोबल बढ़ा है, वहीं राजद कांग्रेस गठबंधन को कुछ महत्वपूर्ण सबक भी मिले हैं. भाजपा खेमे से अलग होने के बाद नीतीश कुमार की राजनीति समाजवादी-धर्मनिरपेक्ष राजनीति के रास्ते पर ही आगे बढ़ी है. ऐसे में लालू-नीतीश के लिए यह जरूरी है कि वे गठबंधन के बिहार मॉडल का विस्तार करें. इस विस्तार में यूपी से सपा और बसपा तो पश्चिम बंगाल से तृणमूल कांग्रेस को सहयोगी बनाए जाने की दिशा में ये नेता पहल कर सकते हैं.

हालांकि इस मुद्दे पर अब तक न तो लालू प्रसाद ने कुछ कहा है और न ही नीतीश कुमार ने, लेकिन इसका आभास उत्तरप्रदेश में जरूर होने लगा है. वहां सपा, बसपा और कांग्रेस की भारी पराजय ने उन तीनों दलों को एहसास करा दिया है कि अब भाजपा से लड़ने के लिए उन्हें एक साथ आना ही होगा. वहां भाजपा की धमाकेदार जीत ने गैर भाजपाई दलों के लिए उम्मीद की एक किरण बाकी रखी है कि हार के बावजूद इन तीनों दलों का मत प्रतिशत भाजपा से ज्यादा है. ऐसे में सपा, कांग्रेस और बसपा के सामने यही विकल्प बचा है. इधर बिहार में जिस तरह से भाजपा में उत्साह है, उससे राजद, जद यू और कांग्रेस के कान खड़े हो गए हैं, इसलिए इस बात की संभावना ज्यादा है कि बिहार के गठबंधन प्रयोग को विस्तार दिया जाए.

2019 के लोकसभा चुनाव से पहले कुछ और राज्यों में चुनाव होने हैं. इनमें गुजरात भी शामिल है. गुजरात चूंकि नरेंद्र मोदी का न सिर्फ गृह राज्य है, बल्कि मोदी मॉडल की राजनीति की प्रयोगशाला भी है. साथ ही साथ डेढ़ दशक से वहां भाजपा सत्ता में भी है. विपक्षी दलों के लिए गुजरात की जंग जीतना उनके कार्यकर्ताओं के मनोबल को बचाए रखने के लिए जरूरी हो गया है. वैसे तो गुजरात की राजनीति में लालू प्रसाद और नीतीश कुमार का कोई सीधा दखल नहीं है लेकिन यह नहीं भूलना चाहिए कि गुजरात के पटेल आंदोलन के नेता उर्जित पटेल नीतीश कुमार से काफी उम्मीदें पाले हैं. उर्जित पटेल वहां कुर्मियों के एक उभरते नेता हैं. इस लिहाज से नीतीश कुमार के प्रति उनका स्वाभाविक आकर्षण है. उर्जित ने कुछ महीने पहले बाजाब्ता तौर पर पटना आकर नीतीश कुमार से मुलाकात भी की है. ऐसे में संभव है कि लालू प्रसाद भी चाहेंगे कि नीतीश कुमार गुजरात के पटेल आंदोलन का समर्थन करें और वहां जाकर भाजपा विरोधी राजनीति को मजबूत करें. उधर उत्तराखंड और मणिपुर में सत्ता गंवा चुकी कांग्रेस के लिए भी उत्तरप्रदेश जीवन-मरन का सवाल बनेगा. लिहाजा कांग्रेस चाहेगी कि उर्जित पटेल को साधने के लिए वे नीतीश का सहारा लें. ऐसे में राजद और कांग्रेस दोनों के लिए गुजरात चुनाव के मद्देनजर, नीतीश कुमार का महत्व बढ़ेगा. यह याद रखने की बात है कि उत्तरप्रदेश चुनाव के दौरान नीतीश कुमार एक दम निष्क्रिय हो गए थे. हालांकि चुनावों से पहले उन्होंने यूपी में अपनी पार्टी के लिए लगातार कई रैलियां की थीं, पर चुनाव आते ही उनकी तरफ से घोषणा की गई कि जदयू वहां चुनाव नहीं लड़ेगा. हालांकि जद यू ने अपने नेता केसी त्यागी से यह घोषणा करवाते हुए यह आरोप भी लगाया था कि सपा और कांग्रेस ने गठबंधन करते समय, जद यू को अपना सहयोगी नहीं बनाया. इसके बावजूद यह नहीं भूलना चाहिए कि यूपी चुनाव परिणाम ने तमाम क्षेत्रीय दलों को चिंतित कर दिया है. उन्हें एहसास हो चुका है कि भाजपा के विस्तार से जहां कांग्रेस के वजूद को खतरा है, वहीं क्षेत्रीय राजनीतिक दलों पर संकट के बादल मंडराने लगे हैं. ऐसे में बिहार को बचाने के लिए राजद और जद यू को बरास्ते गुजरात आगे बढ़ना ही होगा. उन्हें पता चल चुका है कि 2019 में मोदी के तूफान को रोकने के लिए सबसे पहले गुजरात मॉडल को परास्त करना होगा. अगर गुजरात में भाजपा हारी तो 2019 में दिल्ली बच सकेगी और तब ही 2020 में बिहार को बचाया जा सकेगा.■

feedback@chauthiduniya.com

नगर निकाय चुनाव : नए ठिकाने तलाश रहे पार्षद

वाल्मीकि कुमार

सूबे के नगर निकायों एवं नगर परिषद क्षेत्रों के लिए चुनाव की तिथि का निर्धारण जल्द होने वाला है. उत्तर बिहार के मुजफ्फरपुर व दरभंगा नगर निगम समेत सीतामढ़ी, शिवहर, मोतिहारी, मधुबनी व समस्तीपुर सहित अन्य जिलों में नगर परिषद व नगर पंचायत चुनाव को लेकर कवायद शुरू हो गई है. वार्डों के परिसीमन एवं आरक्षण के कारण जहां पुराने चेहरों को नए ठिकाने तलाशने पड़ रहे हैं, वहीं कई वार्डों में सत्ता की कमान नए हाथों में जाने की उम्मीद भी है. आरक्षण के कारण आधी आबादी का उत्साह चरम पर है. इनमें कुछ पुराने तो अधिकतर नए चेहरे चुनावी समर में अपना भाग्य आजमाने की तैयारी में हैं. क्षेत्र में संभावित प्रत्याशियों की कदमताल जोर पकड़ने लगी है. इसके साथ ही प्रत्याशियों के समर्थकों की गुटबंदी भी शुरू हो गई है. अन्य चुनावों की तरह इस चुनाव में भी जीत का मार्ग प्रशस्त करने के लिए धनबल, बाहुबल व जातिबल का सहारा लिया जाता है. इतना तय है कि आरक्षण के बूते स्थानीय राजनीति में महिलाओं का वर्चस्व कायम होगा.

उम्मीद है कि अगले माह निर्वाचन आयोग द्वारा चुनाव की अधिसूचना जारी की जाएगी. इसके तहत शहरी क्षेत्र के नगर निगम, नगर परिषद व नगर पंचायतों के लिए चुनाव की घोषणा की जाएगी. वार्डों के परिसीमन व आरक्षण लागू होने के कारण इस बार चुनावी समीकरण में उलट-फेर होना तय है. कई पार्षदों के लिए नया ठिकाना तलाशना एक

सीतामढ़ी शहर का जर्जर रिंगबांध

चुनौती से कम नही होगा. वहीं कई स्थानों पर निवर्तमान पार्षदों की पत्नियां, तो कहीं नई नवेली दुल्हनें भी चुनावी समर में नजर आएंगी. चुनावी चौपालों के विशेषज्ञों का कहना है कि अगर वार्डों के परिसीमन में हेर-फेर की जाती है, तो जातीय वोटों का बिखराव होना तय है, जिसका असर चुनाव पर पड़ेगा.

बिहार के तिरहुत प्रमंडल में मुजफ्फरपुर और दरभंगा प्रमंडल में नगर निगम का चुनाव होना है. मुजफ्फरपुर नगर निगम के अंतर्गत 49 वार्ड हैं. यहां की मेयर वर्षा सिंह हैं. वही दरभंगा नगर निगम के 48 वार्डों की कमान मेयर गौरी पासवान संभाल रहे हैं. सीतामढ़ी, समस्तीपुर, मोतिहारी व मधुबनी में नगर परिषद का चुनाव है तो एकमात्र शिवहर जिले में नगर पंचायत का चुनाव होना है. इन जिलों में वार्डों की कुल संख्या तकरीबन 130 है. सीतामढ़ी नगर परिषद के अंतर्गत 28 वार्ड हैं, जहां सुवंश राय, समस्तीपुर के 29 वार्ड की वीणा देवी, मोतिहारी के 38 वार्ड के प्रकाश अस्थाना व मधुबनी के 20 वार्ड की कमान सभापति खालिद अनवर संभाल रहे हैं. इसके अलावा शिवहर नगर पंचायत में 15 वार्ड हैं, जहां नीलम सिन्हा अध्यक्ष पद पर मौजूद हैं. सीतामढ़ी जिला में चार नगर पंचायत डुमरा, पुपरी, बेलसंड व बैरगनिया शामिल है.

बोर्ड के सदस्यों के बीच वर्चस्व की लड़ाई को लेकर कई स्थानों पर विकास कार्य प्रभावित होते रहे हैं. नगर विकास विभाग की योजनाओं का सही तरीके से क्रियान्वयन नहीं होने के कारण करोड़ों रुपए खर्च होने के बाद भी आम लोगों को राहत नही मिल पा रही है. योजनाओं में व्याप्त भ्रष्टाचार पर अंकुश नहीं लगा है. उदाहरण के तौर पर सीतामढ़ी नगर परिषद को ले सकते हैं, जहां पिछले चुनाव के बाद गठित बोर्ड के कार्यारंभ से पहले ही परिषद कार्यालय दो खेमों में बंट गया है. एक गंभीर सवाल यह है कि सरकारी आवंटन के बाद भी शहरों का सर्वांगीण विकास क्यों नहीं हो पाता है? शहरी लोगों को कर का भुगतान करने के बाद भी समुचित सुविधा क्यों नही मिल पाती है?

इस संबंध में जानकारों की मानें तो चुनाव के बाद जब मेयर, सभापति अथवा अध्यक्ष के चुनाव की बारी आती है तब धनबल का जबरदस्त खेल होता है. नतीजतन ओहदेदार पद पर वैसे लोग बैठने में कामयाब हो जाते हैं, जो पहुंच वाले व आर्थिक दृष्टिकोण से मजबूत होते हैं. अब देखना है कि आसन्न चुनाव में मतदाता जाति, पार्टी, धनबल और ऐशो आराम वालों को प्रतिनिधित्व का मौका देते हैं या फिर विकास को लेकर ईमानदार पहल करने वालों को जिताते हैं. वैसे चुनाव में अभी वक्त है. मगर इतना साफ है कि इस बार चुनावी दंगल में आरक्षण की ढाल थाम मैदान में ताल ठोकने वाली महिलाओं का वर्चस्व बढ़ेगा. अब निर्वाचित महिला प्रतिनिधि खुद अपनी पहचान मजबूत करेंगी अथवा चहारदिवारी में कैद होकर अपने पति के सहारे राजनीति में उतरेंगी, इस पर ही सशक्त महिला नेतृत्व निर्भर करेगा.■

feedback@chauthiduniya.com

छूटा साथ तो राजद रह गया खाली हाथ

सुनील सौरभ

बिहार विधान परिषद के चार क्षेत्रों में हुए चुनाव के परिणाम ने राजद और कांग्रेस को निराश किया है. वहीं जदयू, भाजपा और रालोसपा के प्रत्याशियों की सफलता ने आने वाले समय में बिहार की राजनीति का एक तरह से संकेत कर दिया है. बिहार की राजनीति में जिसने भी अपने को सुप्रीम माना, जनता ने समय आने पर इन नेताओं को खामोशी से जवाब दिया है. जनता ने किसी को सिर आंखों पर बैठाया तो बौराए नेताओं को नीचे उतारने में देर भी नहीं की. बिहार विधान परिषद के गया स्नातक, शिक्षक निर्वाचन क्षेत्र, कोशी शिक्षक व सारण स्नातक क्षेत्र के चुनाव परिणाम ने देश-प्रदेश के बदलते राजनीतिक परिवेश में बिहार के निवासियों की सोच को उजागर किया है. इस चुनाव की सबसे बड़ी बात यह है कि एनडीए और महागठबंधन में शामिल सभी दलों ने अपने-अपने प्रत्याशी खड़े कर दिए थे. किसी एक ने भी गठबंधन धर्म का पालन नहीं किया. अपने-अपने प्रत्याशी खड़े कर सभी दलों ने अपने-अपने तर्क भी दिए, लेकिन जनता सब जानती है, की तर्ज पर मतदाताओं ने इसका जवाब दे दिया. इसमें सबसे अधिक घाटा कांग्रेस और राजद को हुआ है.

बिहार विधान परिषद के सभापति और गया स्नातक निर्वाचन क्षेत्र से भाजपा के प्रत्याशी अवधेश नारायण सिंह ने लगातार तीसरी बार जीत हासिल की. इन्हें शिकस्त देने के लिए कई राजनीतिक दलों समेत 16 प्रत्याशियों ने जबरदस्त घेराबंदी की थी. मतगणना के अंत-अंत तक चुनाव परिणाम को लेकर सस्पेंस बना रहा, क्योंकि मतगणना के नियम के अनुसार जादुई आंकड़ा प्राप्त करने में अवधेश नारायण सिंह को कुछ मतों की कमी आ रही थी. वैसे राजद प्रत्याशी पुनित कुमार सिंह से भाजपा प्रत्याशी को दोगुने मत मिले थे, लेकिन अवधेश नारायण सिंह सभी दलों के प्रत्याशियों के चक्रव्यूह को तोड़कर अभिमन्यु की तरह निकले और गया स्नातक निर्वाचन क्षेत्र से लगातार तीसरी बार जीत हासिल की. स्थानीय स्तर पर भाजपा के लोगों का भी कुछ अंतर्विरोध था, तो जातीय स्तर पर भी जहां-तहां विरोध हो रहे थे. चुनाव प्रचार के दौरान यह भी कहा जा रहा था कि महागठबंधन के दोनों दलों कांग्रेस और राजद ने अवधेश नारायण सिंह की जाति के ही एक दिग्गज व्यक्ति को चुनाव मैदान में उतारा है, इसलिए उनकी जीत आसान नहीं है. यह प्रचार एक जाति विशेष के कुछ नेताओं द्वारा अपनी जाति के प्रत्याशी के पक्ष में मत प्राप्त करने के लिए

अवधेश नारायण

संजीव श्याम

किए जा रहे थे. राजद ने अपने वरिष्ठ नेता और पूर्व मंत्री जगतानंद सिंह के पुत्र डॉ. पुनित कुमार सिंह को, तो कांग्रेस ने सहकारिता आंदोलन के महान नेता, पूर्व सांसद स्व. तपेश्वर सिंह के पुत्र डॉ. अजय कुमार सिंह को अपना प्रत्याशी बनाया था. अवधेश नारायण सिंह की जीत में जदयू ने भी मौन रहकर एक तरह से इनका मौन समर्थन किया था. अब राजनीतिक विश्लेषक चाहे इसे जिस रूप में लें. हालांकि जीत के बाद विधान परिषद सभापति अवधेश नारायण सिंह ने मुख्यमंत्री नीतीश कुमार के प्रति भी आभार व्यक्त किया, तो महागठबंधन में भूचाल सा आ गया. भारतीय जनता पार्टी के लिए भी गया स्नातक निर्वाचन क्षेत्र प्रतिष्ठा का सवाल बन गया था. प्रदेश नेताओं के साथ-साथ केन्द्रीय मंत्री रविशंकर प्रसाद व गिरिराज सिंह तक ने अवधेश नारायण सिंह के लिए चुनाव प्रचार किया. नतीजा यह है कि गया स्नातक निर्वाचन क्षेत्र के चुनाव परिणाम ने तमाम अटकलों को दरकिनार कर बिहार विधान परिषद के सभापति और भाजपा प्रत्याशी अवधेश नारायण सिंह की जीत पर मुहर लगा दी.

गया शिक्षक निर्वाचन क्षेत्र से रालोसपा के प्रत्याशी संजीव श्याम सिंह लगातार दूसरी बार विजयी हुए. इन्होंने कांग्रेस के हृदय नारायण सिंह को हराकर जीत हासिल की. संजीव श्याम सिंह को 5674 मत मिले तो उनके प्रतिद्वंद्वी हृदय नारायण सिंह को 1953 मत मिले. ऐसे तो रालोसपा के संजीव श्याम सिंह एनडीए के प्रत्याशी थे, लेकिन एनडीए में शामिल लोजपा ने भी अपने प्रत्याशी प्रो. डीएन सिन्हा को चुनाव मैदान में उतार दिया था. इन्हें करारी शिकस्त मिली. यहां महागठबंधन में शामिल कांग्रेस और राजद दोनों ने गया शिक्षक निर्वाचन क्षेत्र से भी अपने-अपने प्रत्याशी दिए थे. राजद ने प्रो. दिनेश प्रसाद सिन्हा को अपना प्रत्याशी बनाया था. राजद प्रत्याशी ने अपनी हार पर कहा कि महागठबंधन में बिखराव मेरी हार का मुख्य कारण रहा. कांग्रेस प्रत्याशी हृदय नारायण सिंह ने भी कुछ ऐसे ही बातें कही. ज्ञात हो कि पिछले चुनाव में प्रो. डीएन सिन्हा मात्र 36 वोट से हारे थे. इस बार रालोसपा प्रत्याशी संजीव श्याम सिंह प्रथम राउंड से ही भारी लीड लिए हुए थे. मगध के दोनों क्षेत्रों से एनडीए प्रत्याशी की लगातार जीत ने बिहार में बदलते राजनीतिक समीकरण और लोगों की बदलती सोच का एहसास राजनीतिक दलों के नेताओं को करा दिया है. कुछ राजनीतिक विश्लेषकों का मानना है कि आने वाले समय में विधान परिषद का यह चुनाव परिणाम बिहार की राजनीति की दिशा को तय करने में एक महत्वपूर्ण कारण बनेगा. इसका एक प्रमुख कारण यह है कि विधान परिषद के चार क्षेत्रों में हुए चुनाव में कांग्रेस और राजद को निराशा हाथ लगी है. सारण स्नातक निर्वाचन क्षेत्र से जदयू के विरेन्द्र नारायण यादव और कोशी शिक्षक निर्वाचन क्षेत्र से जदयू के संजीव सिंह की जीत ने बिहार की राजनीति में अंदर ही अंदर एक हलचल पैदा कर दी है. हालांकि कोशी शिक्षक निर्वाचन क्षेत्र के महागठबंधन समर्थित जदयू प्रत्याशी संजीव सिंह ने एनडीए समर्थित जगदीश चंद्रा को 6013 मतों से मात दी. संजीव सिंह को कुल 8309 मत मिले, जबकि जगदीश चंद्रा को 2296 मत मिले. संजीव सिंह की यह लगातार जीत रही. सारण स्नातक निर्वाचन क्षेत्र से जदयू प्रत्याशी विरेन्द्र नारायण यादव का जीतना भी एक बड़ा संदेश दे गया. जदयू प्रत्याशी विरेन्द्र नारायण यादव ने यहां के निर्वतमान विधान पार्षद और एनडीए समर्थित हम के प्रत्याशी महाचंद्र प्रसाद को हराकर इस सीट पर कब्जा किया. विरेन्द्र नारायण सिंह को 28385 और डॉ. महाचंद्र सिंह को 23271 मत मिले. बिहार की राजनीति में, या यूं कहें कि उत्तर बिहार की राजनीति में महाचंद्र सिंह का तीन दशक से अधिक समय से दबदबा था, लेकिन अपना दल लगातार बदलते रहने के कारण उनकी प्रतिष्ठा में कमी आती गई और परिणाम ये रहा कि इस बार उन्हें हार का सामना करना पड़ा.

बिहार विधान परिषद के दो शिक्षक और स्नातक निर्वाचन क्षेत्र के चुनाव परिणाम ने बिहार की राजनीति में कुछ गरमाहट ला दी है. राजद और कांग्रेस ने मगध में शिक्षक और स्नातक निर्वाचन क्षेत्रों में अपने प्रत्याशियों की हार पर गठबंधन में शामिल जदयू पर सहयोग नहीं करने का आरोप लगाया है. इस बयानबाजी में बड़े से लेकर छोटे नेता तक शामिल हो गए हैं. बिहार विधान परिषद के चार निर्वाचन क्षेत्रों के चुनाव परिणामों से मिले संकेत को अगर राजनीतिक दलों ने नहीं समझा, तो आने वाले समय में वैसे दलों को मतदाताओं की बदलती सोच का खामियाजा भुगतना पड़ सकता है. देश और प्रदेश के बदलते राजनीतिक परिदृश्य में बिहार विधान परिषद के गया स्नातक और शिक्षक तथा कोशी शिक्षक व सारण स्नातक क्षेत्र का चुनाव परिणाम राजनीतिक दलों को चुप-चाप बहुत कुछ कह दे रहा है.■

feedback@chauthiduniya.com

गया नगर निगम चुनाव

आरक्षित होते ही बगलें झांकने लगे दिग्गज पार्षद

चौथी दुनिया ब्यूरो

अंतरराष्ट्रीय धार्मिक स्थल गया की सड़कें, नाले और पानी आपूर्ति के साथ अन्य तरह की नागरिक सुविधाओं का जिम्मा संभाले गया नगर निगम के वर्तमान पार्षदों का सभी समीकरण आरक्षण में बदलाव आते ही गड़बड़ा गया है. इससे सबसे अधिक परेशानी उन पार्षदों को हो रही है, जो खुद अपने वार्ड से लगातार चुनते आ रहे हैं या फिर उनके परिवार के लोगों का कब्जा रहा है. गया नगर निगम के 53 वार्ड पार्षदों में कई ऐसे भी हैं, जिन्होंने अपने वार्ड को पुश्तैनी मान लिया था.

गया नगर निगम के 53 वार्डों के आरक्षण में राज्य के नगर विकास विभाग में ऐसा बदलाव कर दिया कि यहां के दिग्गज पार्षदों को दिन में ही तारे नजर आने लगे. यहां तक कि वर्तमान मेयर और डिप्टी मेयर को भी वार्ड आरक्षित हो जाने के कारण बगलें झांकने को मजबूर होना पड़ रहा है.

दुनिया के नक्शे पर गया एक प्रसिद्ध धार्मिक पर्यटन स्थल है. जैन, बौद्ध, सिख तथा इस्लाम धर्म से जुड़े कई चर्चित स्थलों के होने के कारण गया एक महत्वपूर्ण धार्मिक स्थल बना है. पितरों की मोक्ष स्थली होने के कारण यहां साल भर पिंडदानियों का आगमन होते रहता है. पितृपक्ष पर तो यहां दुनिया भर से लोग पिंडदान करने आते हैं. इसी प्रकार अन्य धर्मावलंबियों का भी यहां साल भर आगमन होता रहता है. इस दृष्टि से गया नगर निगम का पार्षद होना बड़े गर्व की बात है. यहां का मेयर या डिप्टी मेयर होना तो और भी गर्व की बात होती है. हालांकि यह बात अलग है कि चुने गए मेयर-डिप्टी मेयर की छवि स्थानीय लोगों के बीच कैसी है. गया नगर निगम हाल के वर्षों में वित्तीय अनियमितता तथा अन्य तरह की गड़बड़ियों

के लिए हमेशा चर्चा में रहा है. आईएएस नीलेश देवरे जैसे नगर आयुक्त के आने के बाद यह नगर निगम अच्छे कार्यों के लिए जाना जाता था. बाद में गया नगर निगम में आए नगर आयुक्तों ने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया. मई 2017 में गया नगर निगम चुनाव की आहट और वार्डों के आरक्षित होते ही निगम के दबंग पार्षदों के सभी समीकरण उलट-पुलट हो गए.

वर्तमान मेयर सोनी देवी का वार्ड 8 अति पिछड़ों के लिए आरक्षित हो गया है. अब वे अपने बगल के वार्ड नंबर 9 से चुनाव लड़ना चाह रहे हैं. इसी प्रकार गया नगर निगम में शुरू से ही डिप्टी मेयर के पद पर कब्जा जमाए ओंकारनाथ श्रीवास्तव उर्फ मोहन श्रीवास्तव का वार्ड 10 आरक्षित हो गया है. अब उन्होंने बगल के 11 नंबर वार्ड से चुनाव लड़ने की कवायद शुरू कर दी है. वार्ड 22 के पार्षद चर्चित जदयू नेता लालजी प्रसाद ने सीट सामान्य महिला के लिए आरक्षित होते ही दूसरे स्थान से चुनाव लड़ने से इंकार कर दिया है. पूर्व मेयर विभा देवी का वार्ड 5 पुरुष सामान्य के लिए आरक्षित हो गया है. इस बार विभा देवी अपने पति इंद्रदेव यादव को अपने वार्ड से लड़ा रही हैं. वार्ड 4 के पार्षद विनोद कुमार मंडल भी आरक्षित वार्ड हो जाने के कारण नयी जमीन तलाशने में लगे हैं. वार्ड 17 के पार्षद प्रमोद नवदिया ने भी अपना वार्ड महिला के लिए आरक्षित होने के बाद परिवार की किसी महिला को चुनाव मैदान में उतारने का मन बनाया है. वार्ड 25 के अवरार अहमद उर्फ मोला मियां वार्ड महिला के लिए आरक्षित होते ही बगल के 26 वार्ड से चुनाव लड़ने की तैयारी कर चुके हैं. वार्ड 9 ऐसा क्षेत्र हो गया है, जहां से वर्तमान मेयर सोनी देवी तथा पूर्व मेयर आशा देवी आमने-सामने होंगी. वार्ड 36 के पार्षद चितरंजन प्रसाद वर्मा उर्फ चितू अब वार्ड 42 से चुनाव लड़ने की तैयारी में हैं. उनका पुराना घर वार्ड 36 में था और नया मकान वार्ड 42 में है. पूर्व मेयर शागुफ्ता प्रवीण वार्ड 45 से पार्षद हैं. यह वार्ड अब पिछड़ा वर्ग महिला के लिए आरक्षित हो गया है. संयोग ऐसा है कि वे इसी दायरे में आती हैं इसलिए उन्हें वार्ड बदलने की जरूरत नहीं पड़ी. वार्ड 41 के पार्षद शशि किशोर शिशु अपने वार्ड से अपनी पत्नी को चुनाव मैदान में उतारने की तैयारी में हैं, जबकि वे खुद वार्ड 40 से चुनाव लड़ने की तैयारी कर चुके हैं. वार्ड 46 के पार्षद संतोष सिंह भी नयी जमीन तलाश रहे हैं. इनका वार्ड महिला सामान्य के लिए आरक्षित हो गया है. पूर्व मुख्यमंत्री जीतनराम मांझी की बेटी सुनैना देवी वार्ड 1 से पार्षद हैं, लेकिन अब यह वार्ड भी दूसरे के लिए आरक्षित हो गया है. उपर्युक्त जिन पार्षदों की चर्चा की गई, वे सभी अपने आपको गया नगर निगम के दिग्गज पार्षद रहे हैं. राज्य के नगर विकास विभाग के रोटेशन सिस्टम के तहत गया नगर निगम के वार्डों का नए सिरे से आरक्षण होने के बाद सभी पार्षदों का समीकरण गड़बड़ा गया है. दो-तीन बार से वार्डों पर खुद या परिवार के सदस्यों का कब्जा बरकरार रखने वाले पार्षदों ने एक तरह से वार्ड को पुश्तैनी मान लिया था. यही कारण है कि ऐसे पार्षदों को अब परेशानी हो रही है. कई ऐसे भी पार्षद हैं, जो गया नगर निगम के मेयर, डिप्टी मेयर व नगर आयुक्त के साथ मिलकर कई तरह के खेल में लगे हैं. ऐसे कुछ मामलों में जांच भी चल रही है. ऐसे पार्षदों पर शहर के निवासियों का भी खास ध्यान है. निकाय चुनाव में गया नगर निगम के दिग्गज पार्षदों को जनता नकारती है या फिर मौका देती है, यह तो चुनाव के बाद ही पता चलेगा. फिलहाल अधिकतर पुरुष पार्षद बगलें झांकने को मजबूर हैं.■

feedback@chauthiduniya.com

हार के बाद अखिलेश का संकट और गहराया, मुलायम-युग की वापसी की मांग

समाजवादी पार्टी की पराजय के मूल में मुलायम परिवार के कलह का सार्वजनिकीकरण है. कांग्रेस के साथ गठबंधन के फैसले को भी आज अखिलेश को ठिकाने लगाने के उपक्रमों में इस्तेमाल किया जा रहा है. सपा के महासचिव सीपी राय ने खुले तौर पर पार्टी में खुले जंग का ऐलान कर दिया और कहा कि प्रदेश में हार के लिए अखिलेश यादव जिम्मेदार हैं. इस बयान के बावजूद राय पर कोई कार्रवाई नहीं हुई है. अब यह भी कहा जा रहा है कि जिन लोगों को शिवपाल ने टिकट दिए थे या जो मुलायम खेमे के प्रत्याशी थे, वे जीत गए, लेकिन अखिलेश टीम के स्वयंभू जांबाज चुनाव में खेत रहे. शिवपाल खेमे की शिकायत भी रही है कि अखिलेश ने शिवपाल और मुलायम के करीबियों के टिकट काट दिए. इनमें मुलायम के साले प्रमोद गुप्ता और सांसद तेज प्रताप यादव के नाना राम प्रकाश यादव उर्फ नेहरू, अंबिका चौधरी, विश्वभर निषाद, नारद राय, रघुराज सिंह शाक्य जैसे दर्जनभर से अधिक लोग शामिल हैं.

प्रभात रंजन दीन

विधानसभा चुनाव में हार के बाद समाजवादी पार्टी की मुश्किलों का दौर और गहरा गया है. पार्टी में पुराने दिन वापस लाने और मुलायम को फिर से नृत्य सौंपने का दबाव बढ़ता जा रहा है. हार का ठीकरा अखिलेश यादव के सिर पर फोड़ा जाने लगा है. हालांकि मुलायम सिंह यादव हार के लिए अखिलेश को अकेले जिम्मेदार बताए जाने से बचा रहे हैं. जबकि मुलायम यह कह चुके हैं कि गठबंधन नहीं होता तो यूपी में समाजवादी पार्टी की सरकार बनती. दूसरी तरफ 'घमंड के कारण समाजवादी पार्टी हारी' यह बयान समाजवादी पार्टी के नेताओं और कार्यकर्ताओं के बीच केंद्रीय वाक्य बन गया है. पराजय के फौरन बाद ही सपा नेता शिवपाल सिंह यादव ने कहा था कि समाजवादी पार्टी की हार घमंड के कारण हुई है. शिवपाल का इशारा स्पष्ट था सत्ता-दंभ के कारण ही परिवार में कलह बढ़ा, झगड़ा सार्वजनिक हुआ और पार्टी के विध्वंस का कारण बना. हार की समीक्षा के नाम पर सपा की बैठकें भी हो रही हैं और वैचारिक जद्दोजहद की खबरें भी मीडिया तक पहुंचाई जा रही हैं, लेकिन चुनाव परिणाम के बाद गहराते तनाव की खबरें पहले पहुंच जा रही हैं. निवर्तमान मुख्यमंत्री अखिलेश यादव की सौतेली मां साधना गुप्ता का पिछले दिनों मीडिया के सामने आकर पारिवारिक कलह का जिक्र करना, मुलायम, शिवपाल व उनका अपमान करने के लिए अखिलेश को दोषी ठहराना और अपने पुत्र प्रतीक यादव के राजनीति में प्रवेश की इच्छा जताना समाजवादी पार्टी और मुलायम परिवार के स्पष्ट विभाजन की स्पष्ट घोषणा थी. साधना गुप्ता ने साफ-साफ कहा था कि वे अब अपमान बर्दाश्त नहीं करेंगी.

समाजवादी पार्टी की पराजय के मूल में मुलायम परिवार के कलह का सार्वजनिकीकरण है. कांग्रेस के साथ गठबंधन के फैसले को भी आज अखिलेश को ठिकाने लगाने के उपक्रमों में इस्तेमाल किया जा रहा है. सपा के महासचिव सीपी राय ने खुले तौर पर पार्टी में खुले जंग का ऐलान कर दिया और कहा कि प्रदेश में हार के लिए अखिलेश यादव जिम्मेदार हैं. इस बयान के बावजूद राय पर कोई कार्रवाई नहीं हुई है. अब यह भी कहा जा रहा है कि जिन लोगों को शिवपाल ने टिकट दिए थे या जो मुलायम खेमे के प्रत्याशी थे, वे जीत गए, लेकिन अखिलेश टीम के स्वयंभू जांबाज चुनाव में खेत रहे. शिवपाल खेमे की शिकायत भी रही है कि अखिलेश ने शिवपाल और मुलायम के करीबियों के टिकट काट दिए. इनमें मुलायम के साले प्रमोद गुप्ता और सांसद तेज प्रताप यादव के नाना राम प्रकाश यादव उर्फ नेहरू, अंबिका चौधरी, विश्वभर निषाद, नारद राय, रघुराज सिंह शाक्य जैसे दर्जनभर से अधिक लोग शामिल हैं. सीपी राय ने सीधा आरोप लगाया कि ये सारे टिकट राम गोपाल यादव के कहने पर काटे गए. अखिलेश लखनऊ कैंट से खड़ी अपर्णा यादव के चुनाव प्रचार में नहीं गए, लेकिन पास ही सरोजनी नगर से खड़े अनुराग यादव के लिए लगातार प्रचार में जाते रहे. हालांकि ये दोनों सीटें सपा हार गई. सीपी राय बोले कि विधानसभा चुनाव जीतने वाले सपा प्रत्याशियों में अधिकतर वे हैं जिन्हें मुलायम और शिवपाल ने टिकट दिए थे. राय ने कहा कि तमाम अवरोध खड़े किए जाने के बावजूद शिवपाल चुनाव जीते. जौनपुर में भी मुलायम की रैली ने पारसनाथ यादव को मुश्किल हालात से निकालकर चुनाव जिताया. राय ने समाजवादी परिवार के झगड़े में अखिलेश का पक्ष लेने वाले रामगोपाल यादव को भी हार का जिम्मेवार बताया और कहा कि रामगोपाल या तो अपनी गलतियां स्वीकार करें, या पार्टी को उन पर वही कार्रवाई करनी चाहिए, जो वह दूसरों पर करते रहे हैं. राय ने साफ-साफ कहा कि रामगोपाल पर भाजपा के साथ हाथ मिलाने का आरोप लगता था. चुनाव के नतीजे आने के बाद यह शक और पुख्ता हो गया है.

बहरहाल, विधानसभा चुनाव में हार के बाद सपा में मुलायम को नेतृत्व वापस देने की मांग तेज होने लगी है. खास तौर पर मुलायम और उनके भाई शिवपाल सिंह यादव के करीबी नेता चाहते हैं कि चुनाव के बाद पार्टी की बागडोर मुलायम के हाथों में सौंपने का अखिलेश अपना वादा पूरा करें. सपा के एक नेता ने कहा कि अखिलेश ने विधानसभा चुनाव तक सपा की बागडोर संभालने की बात कही थी. अब उन्हें पार्टी की बागडोर नेताजी को सौंप देनी चाहिए. अखिलेश के करीबी रहे पूर्व मंत्री मधुकर जेटली ने भी कहा कि मुलायम सिंह यादव का सम्मान वापस लौटाया जाना चाहिए. इन मांगों का असर पार्टी में दिखने भी लगा है. विधानसभा चुनाव में हार के कारणों की समीक्षा के लिए शुरू हुई बैठक में मुलायम सिंह यादव भी शरीक हुए. हालांकि शिवपाल इन बैठकों से अब भी बेदखल हैं. समीक्षा बैठक में टिकट वितरण से लेकर जातीय समीकरण तक के मसलों को केंद्रित कर चर्चा हुई, हार की वजहों पर विचार-विमर्श हुए. लेकिन किसी भी नेता ने पारिवारिक कलह के महत्व-पूर्ण कारण को जुबान तक आने नहीं दिया. 'घमंड के कारण सपा हारी' वाले शिवपाल के बयान को भी समीक्षा में शामिल नहीं किया गया. ऐसे में समीक्षा क्या होगी और वह कितनी ईमानदार होगी, इसे समझा जा सकता है. समीक्षा के लिए पहली बैठक लखनऊ स्थित जनेश्वर मिश्र ट्रस्ट में बुलाई गई थी, जिसमें मुलायम और शिवपालवादियों के आने पर प्रतिबंध था. बैठक में मुलायम आए. पार्टी के लोग ही कहते हैं कि विधानसभा चुनाव में समाजवादी पार्टी की हार का प्रमुख कारण पार्टी का कलहजनित विभाजन रहा. प्रदेश के मध्यम वर्गीय और निम्न वर्गीय मतदाताओं को अखिलेश द्वारा जबरन पार्टी पर कब्जा और पिता मुलायम की अपमानजनक रुखसती की कार्रवाई पसंद नहीं आई. अखिलेश के इस रवैये को पिता-पुत्र के सम्मानजनक सम्बन्धों के संस्कार पर आघात माना गया. जबकि अखिलेश के सिपहसालारों ने उन्हें इसका अहसास तक नहीं होने दिया. पार्टी के कार्यकर्ताओं से लेकर जनता तक इसका गलत संदेश पहुंचा, जो चुनाव परिणाम पर दिखा.

यह भी सही है कि चुनाव के दौरान सपा के प्रचार अभियान में संगठन कहीं नहीं दिखा. अखिलेश अपने बूते चुनाव को सफलतापूर्वक निकाल ले जाने का खोखला-खयाल पाले रहे. हर जगह पार्टी के प्रचार के लिए अखिलेश और डिंपल का ही चेहरा दिखता रहा. स्वाभाविक रूप से लोगों को मुलायम सिंह यादव, शिवपाल, अमर सिंह जैसे नेताओं को देखने की आदत भी थी और मांग भी थी. अमर को बाहर धकेल दिया गया, शिवपाल को अपने दायरे में सिमटे रहने के लिए विवश कर दिया गया और मुलायम को कहीं बाहर निकलने नहीं दिया गया. एक-दो स्थानों पर जाने के बाद मुलायम को कहीं भी जाने नहीं दिया गया. सपा नेता कहते हैं कि अखिलेश ने कांग्रेस से गठबंधन के बारे में भी किसी से सलाह-मशविरा नहीं किया. यह गठबंधन सपा की हार का बड़ा कारण साबित हुआ. गठबंधन के कारण सपा ने 298 और कांग्रेस ने 105 सीटों पर चुनाव लड़ा. अगर समाजवादी पार्टी सभी 403 सीटों पर चुनाव लड़ती तो उसके खाते में आया संख्याबल कुछ और ही होता. मुलायम सिंह ने इस गठबंधन को लेकर अपनी असहमति जताई थी, लेकिन अखिलेश ने अपने पिता को अप्रासंगिक तो पहले ही बना दिया था. प्रदेश के लोगों में सपा के पारिवारिक कलह के साथ-साथ यूपी की बदहाल कानून-व्यवस्था को लेकर भी गहरी नाराजगी थी. लोगों का कहना था कि पारिवारिक कलह के कारण अखिलेश ने लंबे अर्से से शासन व्यवस्था पर ध्यान देना बंद कर दिया था. नतीजतन प्रदेश में कानून-व्यवस्था की स्थिति बदतर होती चली गई. साम्प्रदायिक हिंसा के साथ-साथ बलात्कार, हत्याएं, डकैती और लूटपाट जैसी वारदातों में जबरदस्त बढ़ोत्तरी हुई. यहां तक कि महिलाओं के साथ छेड़खानी और छेड़खानी का विरोध करने पर लड़की के अभिभावकों की हत्या की घटनाओं में भी चिंताजनक इजाफा हुआ. पत्रकारों और व्यापारियों की नृशंस हत्याओं ने राजधानी लखनऊ से लेकर पूरे राज्यभर की जनता को हतप्रभ कर दिया था. इसका गंभीर असर चुनाव परिणामों पर पड़ा. अखिलेश के नेतृत्व वाली समाजवादी पार्टी अपने पारम्परिक वोट बैंक को भी अपने पास सुरक्षित नहीं रख पाई. मुस्लिम वोट मुलायम के साथ प्रतिबद्ध रूप से जुड़ा था, लेकिन अखिलेशकाल में यह वोट बैंक खिसका. प्रदेश में सैकड़ों साम्प्रदायिक दंगे हुए. मुजफ्फरनगर का दंगा समाजवादी पार्टी के लिए विनाशकारी साबित हुआ. भाजपा ने सपा के पिछड़ा वोट बैंक को भी अपनी तरफ साधा. केशव प्रसाद मौर्य के हाथ में प्रदेश भाजपा की कमान, सुहेलदेव भारतीय समाज पार्टी के साथ गठबंधन, स्वामी प्रसाद मौर्य और उमा भारती जैसे नेताओं को तरजीह जैसी अनगिनत चालों को अखिलेश और उनके चाटुकार-सलाहकार समझ नहीं पाए और गैर-यादव पिछड़ा वर्ग बड़े पैमाने पर सपा से खिसक कर भाजपा में चला गया.

अखिलेश ने प्रदेश के विकास का मुद्दा बनाया और 'काम बोलता है' का नारा दिया. लेकिन यह नारा प्रदेश के गांवों और कस्बों में जाकर फंस गया. लोगों ने पूछना शुरू किया कि कर्जे में दबा किसान मेट्रो ट्रेन खाएगा या एक्सप्रेस हाई-वे? प्रदेश का बेरोजगार लैपटॉप खाएगा या मोबाइल फोन? प्रदेश का आम आदमी अपराधियों की गोली झेले या खोखले काम की बोली? भाजपा ने इस मर्म को समझा और बड़ी चालाकी से अखिलेश के नारे 'काम बोलता है' को 'कारनामा बोलता है' में तब्दील कर उसका सियासी लाभ उठा लिया. इसे भांप कर मोदी ने अपनी रैली में यह ऐलान किया कि प्रदेश में सरकार बनते ही पहली कैबिनेट बैठक में किसानों का कर्जा माफ करने का फैसला लिया जाएगा. भाजपा को इसका भी फायदा मिल गया. समाजवादी पार्टी के नारों की छेद में घुस कर भाजपाई रणनीतिकारों ने धांय-धांय सियासी फायरिंग की और अखिलेशवादी समाजवादी इसे समझ नहीं पाए या इसकी काट नहीं तलाश पाए. किसी सलाहकार ने 'गुजरात का गदहा' का मसला उठाने का सुझाव दे दिया और इस सुझाव का पालन कर अखिलेश ने अपनी भद्द पिटवा ली. गुजरात के लोगों की तो छोड़िए, यूपी के लोगों ने भी मुख्यमंत्री अखिलेश के इस अमर्यादित टिप्पणी को पसंद नहीं किया. उधर, भाजपा ने अखिलेश के ही इस जुमले को उठा कर उसका राजनीतिक फायदा उठा लिया.

अपनी ही रणनीति, अपना ही बयान और अपना ही झगड़ा समाजवादी पार्टी पर इतना भारी पड़ गया कि सपा अपने गढ़ में भी इज्जत बचाने में नाकाम रही. सपा के गढ़ में भाजपा ने अपना परचम लहरा दिया और वहां सपा बुरी तरह से पराजित हुई. समाजवादी पार्टी अपने गढ़ इटावा में पांच में से चार सीटें हार गई. बदायूं की छह में से पांच सीटों पर समाजवादी पार्टी हारी. फिरोजाबाद की पांच में से चार सीटों पर सपा हारी. इटावा में भी सपा तीन में से दो और कन्नौज में तीन में से दो सीटों पर हार गई. सपा गाजियाबाद में महज एक सीट जीत पाई. जबकि 2012 के चुनाव में समाजवादी पार्टी गाजियाबाद की सात में से छह सीटों पर जीती थी. जौनपुर में सपा छह में से महज तीन सीटें जीत पाई. 2012 के चुनाव में सपा ने आजमगढ़ में नौ सीटें जीती थीं, इस बार वहां से सपा को पांच सीटें मिलीं. अखिलेश सरकार के अधिकांश मंत्री भी अपनी सीट नहीं बचा पाए. अखिलेश कैबिनेट के 25 मंत्रियों में से सिर्फ 10 मंत्रियों की ही अपनी सीट बच सकी. हारने वालों में स्वनामधन्य गायत्री प्रजापति, अरविंद सिंह गोप, कमाल अख्तर, रविदास मेहरोत्रा, अभिषेक मिश्रा जैसे कई नाम हैं. समाजवादी पार्टी की हार ने बड़े-बड़े नेताओं को इतना हतप्रभ कर दिया कि आजम खान जैसे कद्दावर बीच सभा में रो पड़े. फूट-फूटकर रोते हुए आजम खान ने कहा, 'बेरोजगार नौजवानों हमें माफ करना हम आपकी ख्वाहिश पूरी नहीं कर पाएंगे'. इस पर भीड़ में से आवाज आई कि पांच साल तक तो सत्ता में थे, तब नौजवानों के लिए क्या कर दिया? ■

खुद अखिलेश का वजूद संकट में

विधानसभा में विपक्ष का नेता चुने जाने का मसला उतना बड़ा नहीं जितना खुद अखिलेश के लिए व्यक्तित्व का संकट पैदा होने वाला है. अखिलेश विधायक नहीं हैं. वे विधान परिषद के सदस्य हैं. अब मौजूदा स्थिति में विधानसभा में विपक्ष के नेता की कुर्सी पर अखिलेश नहीं बैठ पाएंगे. उन्हें विधान परिषद में ही बैठना पड़ेगा. अगर शिवपाल यादव विधानसभा में विपक्ष के नेता चुने जाते हैं तो अखिलेश के लिए क्या-क्या संकट और चुनौतियां सामने आएंगी, इसे समझा जा सकता है. विधानसभा में विपक्ष के नेता की कुर्सी पर बैठने के लिए अखिलेश को विधानसभा चुनाव लड़ कर और जीत कर आना होगा. इसके लिए कोई विधायक उनके लिए कुर्बानी दे और उसकी सीट से अखिलेश चुनाव लड़ें. मौजूदा स्थिति में अखिलेश का जीतना मुश्किल ही लगता है. सपा के नेता ही कहते हैं कि अखिलेश के पास एक ही विकल्प बचा है कि वे राज्यसभा चले जाएं. लेकिन राज्यसभा में अखिलेश को अमर सिंह के साथ बैठना पड़ेगा.

गायत्री से धूमिल हुई अखिलेश की छवि

छवि साफ रखने की अखिलेश की कोशिश भ्रष्ट मंत्री गायत्री प्रजापति और भ्रष्ट इंजीनियर यादव सिंह को नंगा समर्थन देने से बेमानी और फर्जी ही साबित हुई. अखिलेश के इस विरोधाभासी आचरण को प्रदेश के लोगों ने सही नहीं माना. पूरे चुनाव के दरम्यान जब तक अखिलेश यादव मुख्यमंत्री रहे भ्रष्ट मंत्री और सामूहिक बलात्कार के आरोपी गायत्री प्रसाद प्रजापति को पुलिस ने गिरफ्तार नहीं किया. मुख्यमंत्री पद जाते ही गायत्री राजधानी लखनऊ से ही गिरफ्तार कर लिए गए. इससे अखिलेश की छवि धूमिल हुई.

feedback@chauthiduniya.com

हार के बाद मायावती का संकट और गहराया, दलित-हित की वापसी की मांग

अब 'मुसलमान' बोल रहा है

उत्तर प्रदेश के विधानसभा चुनाव में दलितों के लिए आरक्षित 84 विधानसभा सीटों के नतीजे भी मायावती के दलित-प्रभाव का पर्दाफाश करते हैं. दलितों के लिए आरक्षित 84 विधानसभा सीटों में से बसपा मात्र दो सीटों पर जीती. कई जगहों पर बसपा ने अपनी पुरानी पकड़ भी खो दी. आगरा में नौ में से एक भी सीट बसपा को हासिल नहीं हुई. आगरा दलित बहुल और ख़ास तौर पर चमार बहुल माना जाता है. आगरा में बसपा बेहतर प्रदर्शन करती रही है.

उत्तर प्रदेश के विधानसभा चुनाव में सपा, बसपा और कांग्रेस की धुर्रियां बिखर गईं. कांग्रेस तो पहले से ही बे-जमीन थी. बसपा ने भी इस चुनाव में अपनी जमीन गंवा दी. लोकसभा चुनाव में शून्य पर आउट होने वाली बसपा के लिए राजनीतिक समीक्षकों का आकलन था कि विधानसभा चुनाव में मायावती अपना खोया हुआ जनाधार वापस समेट सकती हैं. लेकिन ऐसा नहीं हुआ. बसपा को 19 सीटों पर संतोष करना पड़ा. हालांकि 1991 में बसपा को महज 12 सीटें मिली थीं. लिहाजा, आत्ममंथन और सुधार के जरिए बसपा का पुनर्जीवन हो सकता है. इसके लिए दलित-हित की प्राथमिकता को वापस लाने की मांग हो रही है. कांशीराम के सिद्धांतों को अक्षरशः लागू करने की मांग हो रही है. लेकिन बसपा में वैचारिक सुधार के संकेत नहीं दिख रहे हैं. मायावती का सारा विचार ईवीएम के इर्द-गिर्द घूम कर नष्ट हो रहा है. अब तो मायावती के ही राजनीतिक भविष्य पर सवाल खड़ा हो गया है. समाजवादी पार्टी की हार भी समाजवादियों के लिए सीख का संदेश है. अगर इस हार से सीखे तो पार्टी में फिर से जान फूंकी जा सकती है, नहीं सीखे और कलह के नए-नए अध्याय खोलते रहे, तो गए. 2017 के विधानसभा चुनाव में सपा को 47 सीटें मिलीं, जो अब तक की सबसे कम सीटें हैं. 2007 के विधानसभा चुनाव में सपा को 97 सीटें हासिल हुई थीं. कांग्रेस पर तो चर्चा भी बेकार है. वह न केवल उत्तर प्रदेश बल्कि पूरे देश में अप्रासंगिक हो गई है.

बसपा को 2012 के विधानसभा चुनाव में 87 सीटें मिली थीं, उसके जरिए मायावती राज्यसभा तक पहुंच गई थीं. इस बार वह भी मुश्किल में फंस गया है. अगले साल अप्रैल महीने में मायावती का राज्यसभा का कार्यकाल समाप्त होने वाला है. अब बसपा के पास उतने विधायक नहीं हैं, जिनके बूते मायावती दोबारा राज्यसभा के लिए मनोनीत हो सकें. सपा के भी राज्यसभा में 18 की सदस्य-संख्या कम होने वाली है. अभी बसपा पर बात हो रही है. बसपा को लगातार तीन बार से हार का मुंह देखना पड़ रहा है. 2012 के विधानसभा चुनाव में बसपा के हाथ से सत्ता चली गई और वह 87 सीटों पर आकर टिक गई. 2014 के लोकसभा चुनाव में बसपा को एक भी सीट नहीं मिली. 2017 के विधानसभा चुनाव में बसपा को 19 सीटें हासिल हो पाईं. लोकसभा चुनाव में शून्य पाने के बाद मायावती ने अपनी सोशल-इंजीनियरिंग में फेरबदल का फॉर्मूला बदल कर सत्ता पाने की रणनीति बनाई. ब्राह्मण-दलित कॉम्बिनेशन के जरिए वर्ष 2007 के चुनाव में मायावती को भारी कामयाबी हासिल हुई थी. तब उसे मायावती की सोशल-इंजीनियरिंग का नाम दिया गया था. उस समय इस फॉर्मूले के पीछे सतीश चंद्र मिश्र की भूमिका भी सुर्खियों में आई थी. यह सोशल-इंजीनियरिंग 2012 के विधानसभा चुनाव में नहीं चली और 2014 के लोकसभा चुनाव में मोदी-आंधी में उड़ गई. बसपा के थिंक-टैंक ने 2017 के विधानसभा चुनाव के लिए सोशल-इंजीनियरिंग के फॉर्मूले में रद्दोबदल किया. इसे सोशियो-रिलीजियस-इंजीनियरिंग में तब्दील करने की रणनीति तैयार की गई. बसपा के रणनीतिकारों को यह लगा कि मुस्लिम-दलित समीकरण स्थापित कर वह मुसलमानों को सपा से खींच कर अपनी तरफ ला पाएगी और यह भाजपा के हिंदू ध्रुवीकरण को भी रोक पाएगी. इस फॉर्मूले की सफलता को लेकर मायावती इतनी निश्चिंत हो गईं कि उनका पूरा ध्यान अधिक से अधिक मुस्लिम प्रत्याशियों को टिकट देने और सपा से मुस्लिम वोट के खिसकने का भय पैदा करने में ही लग गया. लेकिन वह यह ध्यान नहीं दे पाईं कि उनकी अपनी ही जाति और अन्य दलित जातियां भी भाजपा की तरफ तेजी से खिसक रही हैं. गैर-यादव पिछड़ी जातियां पहले से ही सपा और बसपा दोनों से बिदक कर भाजपा की तरफ जा चुकी थीं. इस बार के विधानसभा चुनाव में बसपा नेता मायावती ने तमाम रैलियां कीं और खूब भाषण दिए. उन्होंने सभी जाति और धर्म की तो बात की, लेकिन मुस्लिम एजेंडा उनकी हर सभा में केंद्र में रहा. लेकिन दलित-मुस्लिम वोट बटोरने का उनका फॉर्मूला पूरी तरह फेल साबित हुआ. इस विधानसभा चुनाव में बसपाई-जुगाड़ से विभिन्न मुस्लिम संगठनों और धर्मगुरुओं द्वारा बसपा को समर्थन देने के ऐलान से भी अन्य मतदाता बसपा से बिदक गए. दिल्ली की जामा मस्जिद के शाही इमाम मौलाना अहमद बुखारी, प्रमुख शिया धर्मगुरु और ऑल इंडिया मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड के वरिष्ठ सदस्य मौलाना कल्बे जव्वाद और पूर्वांचल के कुछ इलाकों में प्रभावशाली मानी जाने वाली राष्ट्रीय उलेमा काउंसिल समेत कई मुस्लिम संगठनों और धर्मगुरुओं ने बसपा को समर्थन देने का ऐलान किया था और बसपा के पक्ष में वोट देने की मुसलमानों से अपील की थी. मायावती का यह कार्ड बुरी तरह फ्लॉप हो गया. इसका परिणाम यह निकला कि रामपुर, सहारनपुर, मुरादाबाद, अमरोहा, बरेली, आजमगढ़, मऊ, शाहजहांपुर, शामली, मुजफ्फरनगर, मेरठ और अलीगढ़ जैसे मुस्लिम बहुल जिलों से भी बसपा साफ हो गई. इन मुस्लिम बहुल जिलों की 77 सीटों में से बसपा को मात्र चार सीटें ही मिलीं. रामपुर में मुस्लिम आबादी 52 प्रतिशत है, लेकिन यहां की पांच में से एक भी सीट बसपा को नहीं मिली. सहारनपुर और मुरादाबाद में भी बसपा का यही हाल हुआ. सहारनपुर की सात और मुरादाबाद की सभी नौ सीटों पर बसपा बिल्कुल साफ हो गई. देवबंद जैसी कट्टर मुस्लिम प्रभावित विधानसभा सीट पर भी मौलानाओं की प्रायोजित-अपील का कोई असर नहीं पड़ा. वहां भी बसपा हार गई. मुरादाबाद में अधिकतर सीटों पर बसपा तीसरे नम्बर को प्राप्त हुई. अमरोहा में भी बसपा चार में से एक भी सीट नहीं जीत सकी. बरेली की नौ सीटों में सब पर बसपा बुरी तरह हारी. शाहजहांपुर की सभी छह सीटों पर बसपा हारी और तीसरे स्थान पर रही. आजमगढ़ की 10 सीटों में से सिर्फ तीन सीटें बसपा को मिलीं. बसपा आजमगढ़ में सगड़ी, लालगंज और दीदारगंज सीट पर जीती. मऊ की सदर सीट को छोड़कर वहां भी बाकी तीनों सीटों पर बसपा हार गई. माफिया सरगना मुख्तार अंसारी बसपा प्रत्याशी के बतौर मऊ विधानसभा सीट से चुनाव जीते, लेकिन मुख्तार के बेटे अब्बास अंसारी घोसी सीट से और मुख्तार के भाई सिबगतुल्ला अंसारी मुहम्मदाबाद (युसूफपुर) सीट से चुनाव हार गए. मेरठ की सात सीटों और अलीगढ़ की सात सीटों पर भी बसपा की बुरी हार हुई. अपनी सोशल-रिलीजियस-इंजीनियरिंग के फेर में बसपा रसातल में चली गई.

अब मायावती किस तरह की 'इंजीनियरिंग' से डूबी हुई पार्टी को उबारेंगी, यह समय ही बताएगा. अब तो 2019 का लोकसभा चुनाव भी दरवाजा खटखटाने लगा है. अगर बसपा की राजनीतिक दशा ऐसी ही रही तो उसका राष्ट्रीय पार्टी होने का दर्जा भी जाता रहेगा. विधानसभा चुनाव का परिणाम आने के बाद मायावती ने बौखलाहट में ईवीएम में छेड़छाड़ का मसला तो उठाया, लेकिन वे भी यह समझती हैं कि उनकी पार्टी अपना जनाधार लगातार खोती जा रही है. यह स्थिति बसपा के लिए चिंताजनक है. हाल के वर्षों में बसपा का वोट प्रतिशत जिस तेजी से गिरा है, वह बसपा की जमीन के खिसकते चले जाने की ही सनद है. वर्ष 2007 के विधानसभा चुनाव में बसपा को 30.43 प्रतिशत वोट मिले थे. उस बार बसपा उत्तर प्रदेश की सत्ता पर काबिज हुई थी. लेकिन 2009 के लोकसभा चुनाव में बसपा का वोट प्रतिशत 27.42 रह गया. 2012 के विधानसभा चुनाव में 25.91 प्रतिशत वोट पाकर बसपा सत्ता से बाहर हो गई. 2014 के लोकसभा चुनाव में बसपा का वोट प्रतिशत कम होकर 19.6 प्रतिशत रह गया, फिर भी उसे एक सीट नहीं मिली. इस बार के चुनाव में बसपा का वोट प्रतिशत थोड़ बढ़ कर 22.2 पर आया, लेकिन उसकी सीटें 19 पर आकर टिक गईं. समाजवादी पार्टी को इस बार के चुनाव में 21.8 प्रतिशत वोट मिले, जबकि उसे 47 सीटें हासिल हुईं. सपा और बसपा का वोट प्रतिशत मिला दें तो 44 प्रतिशत वोट दोनों पार्टियों को मिला कर 66 सीटें ही दिला पाया, जबकि भाजपा ने 39.7 प्रतिशत वोट पाकर 312 विधानसभा सीटें समेट लीं. 2012 के चुनाव में कांग्रेस को 11.5 प्रतिशत वोट और 28 सीटें मिली थीं, लेकिन इस बार वह 6.2 प्रतिशत वोट और सात सीटों पर सिमट गई.

उत्तर प्रदेश के विधानसभा चुनाव में दलितों के लिए आरक्षित 84 विधानसभा सीटों के नतीजे भी मायावती के दलित-प्रभाव का पर्दाफाश करते हैं. दलितों के लिए आरक्षित 84 विधानसभा सीटों में से बसपा मात्र दो सीटों पर जीती. कई जगहों पर बसपा ने अपनी पुरानी पकड़ भी खो दी. आगरा में नौ में से एक भी सीट बसपा को हासिल नहीं हुई. आगरा दलित बहुल और ख़ास तौर पर चमार बहुल माना जाता है. आगरा में बसपा बेहतर प्रदर्शन करती रही है. 2012 में यहां बसपा ने छह सीटों पर जीत दर्ज की थी. आगरा के अलावा सीतापुर को भी दलितों का बड़ा बसावर माना जाता है, लेकिन यहां भी बसपा को मात्र एक सीट ही हासिल हुई. दलित प्रभाव वाले अंबेडकर नगर में भी बसपा को तीन सीटें ही हासिल हुईं, जिसमें अकबरपुर शामिल है, जहां से बसपा के प्रदेश अध्यक्ष राम अचल राजभर उम्मीदवार थे. दलितों की बड़ी आबादी वाले जिले उन्नाव, सीतापुर, सोनभद्र, हरदोई, आजमगढ़, औरैया, बाराबंकी, चित्रकूट, चंदौली, फतेहपुर, जालौन, झांसी, कौशांबी, खीरी, ललितपुर, महोबा, मिर्जापुर, रायबरेली में बसपा का बुरा नतीजा हुआ. कौशांबी की सभी तीन सीटों पर बसपा हार गई, जहां 36 प्रतिशत दलित आबादी है. यहां दलितों का वोट भाजपा के खाते में गया. चार बार के बसपा विधायक इंद्रजीत सरोज भी मांझापुर से अपनी सीट बचा नहीं सके.■

बसपा से क्यों खिसके दलित!

एसआर दारापुरी

बसपा नेता मायावती इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन (ईवीएम) में गड़बड़ी का शिगूफा छोड़ कर अपनी हार की झेंप मिटाने की कोशिश कर रही हैं. लेकिन सवाल है कि क्या इससे मायावती पराजय की जिम्मेदारी से बच जाएंगी? इसका जवाब आप भी समझते हैं. हकीकत यही है कि दलित बसपा से खिसक गए हैं. उत्तर प्रदेश में दलितों की आबादी कुल आबादी का 21 प्रतिशत है. इनमें करीब 66 उपजातियां हैं, जो सामाजिक तौर पर बंटी हुई हैं. इन उप जातियों में जाटव/चमार 56 प्रतिशत, पासी 16 प्रतिशत, धोबी, कोरी और बाल्मीकि 15 प्रतिशत, गोंड, धानुक और खटिक 5 प्रतिशत हैं. अति-दलित उप जातियां नौ हैं, जिनमें रावत, बहेलिया, खरवार और कोल शामिल हैं, जिनका प्रतिशत पांच है. शेष 49 उप जातियां लगभग 3 प्रतिशत हैं. जाति के हिसाब से चमार/जाटव आजमगढ़, आगरा, बिजनौर, सहारनपुर, मुरादाबाद, गोरखपुर, गाजीपुर और सोनभद्र में अधिक हैं. सीतापुर, रायबरेली, हरदोई और इलाहाबाद जिलों में पासी अधिक हैं. शेष समूह जैसे धोबी, कोरी और बाल्मीकि की अधिकतर आबादी बरेली, सुल्तानपुर और गाज़ियाबाद में है. बसपा के दलित वोट बैंक में आई गिरावट की मुख्य वजह मायावती द्वारा बहुजन का सिद्धांत छोड़ कर सर्वजन सिद्धांत को अपनाया जाना है. इससे दलित वर्ग का बड़ा हिस्सा नाराज हो कर मायावती से अलग हो गया. 2012 के विधानसभा चुनाव के नतीजों पर ध्यान दें तो पाएंगे कि उस बार मायावती 89 आरक्षित सीटों में से केवल 15 पर जीत पाई थीं. जबकि सपा 55 सीटें जीती थी. 89 आरक्षित सीटों में 35 सीटों पर जाटव/चमार और 25 सीटों पर पासी जीते थे. इसमें सपा के 21 पासी प्रत्याशी और मायावती के मात्र दो पासी प्रत्याशी जीते थे. बसपा ने उस चुनाव में जो 15 आरक्षित सीटें जीती थीं, वह अधिकतर पश्चिमी उत्तर प्रदेश में थीं, जहां जाटव उपजाति अधिक है. मायावती को उस समय भी पासी बहुल और कोरी बहुल क्षेत्र में बहुत कम सीटें मिली थीं. पूर्वी और मध्य उत्तर प्रदेश में, जहां चमार उपजाति का बाहुल्य है, वहां भी मायावती को बहुत कम सीटें मिली थीं. यानी, स्पष्ट था कि बसपा से पासी, कोरी, खटीक, धोबी और बाल्मीकि वोट तो खिसक ही रहा था, चमार/जाटव वोट बैंक (70 प्रतिशत चमार (रैदास) और 30 प्रतिशत जाटव) भी बसपा से खिसक रहा था. लेकिन मायावती ने इस पर ध्यान देने के बजाय दूसरे समीकरणों पर ध्यान दिया. नतीजा यह हुआ कि 2014 के लोकसभा चुनाव में मायावती को एक भी सीट नहीं मिली. बसपा से दलित वोट बैंक खिसकने का मुख्य कारण मायावती का भ्रष्टाचार, विकासहीनता, दलित उत्पीड़न की उपेक्षा और उनका राजशाही रवैया भी रहा है. दलित समस्याओं का समाधान खोजने के बजाय अंधाधुंध मूर्तिकरण को भी अधिकतर दलितों ने पसंद नहीं किया. दलितों में एक यह धारणा भी स्थापित हुई कि बसपा सरकार का सारा लाभ केवल मायावती की उपजाति ख़ास तौर पर चमारों/जाटवों को ही मिला. इससे भी गैर चमार/जाटव उपजातियां मायावती से दूर हो गईं. चुनाव में टिकटों की खरीद-बिक्री ने भी दलितों को बिदकाने का काम किया. दलितों का उत्पीड़न करने वालों, माफियाओं, अपराधियों और धनबलियों को टिकट देकर दलितों को उन्हें वोट देने के लिए निर्देशित करने का मायावती का तौर-तरीका भी दलितों को नागवार लगता रहा. उन्हें लगा कि दलित राजनीति में जिनसे उनकी मूल लड़ाई है, मायावती ने उन्हें ही सत्ता-सुख में शरीक कर लिया. इस बार के विधानसभा चुनाव में भी मायावती ने आधा दर्जन ऐसे लोगों को टिकट दिया जो दलित हत्या, दलित बलात्कार और दलित उत्पीड़न के आरोपी हैं.

उत्तर प्रदेश के लगभग 60 प्रतिशत दलित गरीबी की रेखा से नीचे जीवन यापन कर रहे हैं. लगभग 60 प्रतिशत दलित महिलाएं कुपोषण की शिकार हैं. 70 प्रतिशत दलित बच्चे कुपोषण का शिकार हैं. अधिकतर दलित बेरोजगार हैं और उत्पादन के साधनों से वंचित हैं. मायावती ने सर्वजन के चक्कर में भूमि सुधारों को नज़रअंदाज़ किया जो दलितों के सशक्तिकरण का सबसे बड़ा हथियार हो सकता था. मायावती के भ्रष्टाचार के कारण मनरेगा, राशन वितरण व्यवस्था, इंदिरा आवास, आंगनबाड़ी केंद्र और वृद्धा विकलांग और विधवा पेंशन जैसी कल्याणकारी योजनाएं भीषण भ्रष्टाचार के चंगुल में चली गईं. इन वजहों से दलितों ने मायावती को नकार दिया.■

प्रभात रंजन दीन
feedback@chauthiduniya.com

आलोचना, अज्ञान और अवसर

अनंत विजय

हिंदी साहित्य में हर दौर में आलोचना को लेकर लंबी बहस होती रही है. बहुधा आलोचकों पर आरोप लगते हैं कि वे अपना काम ठीक से नहीं कर रहे हैं. पर हाल के दिनों में रचनाकारों का आलोचकों को सर्टिफिकेट देने की प्रवृत्ति काफी बढ़ी है. हालांकि हिंदी आलोचना के अभी इतने बुरे दिन नहीं आए हैं कि उनको रचनाकारों के प्रमाण-पत्र की आवश्यकता पड़े. अगर हम गंभीरता से विचार करें तो रचनाकार और आलोचक के बीच के झगड़े का कोई अर्थ नहीं है. कुछ उत्साही लेखक तो आलोचना को रचना का परजीवी तक करार दे देते हैं. उनके तर्क होते हैं कि रचना ना हो तो आलोचना कैसे होगी? सतह पर या प्रत्यक्ष रूप से यह तर्क ठीक प्रतीत हो सकता है, लेकिन रचना और आलोचना के संबंधों को जाननेवालों की राय अलग होती है. रचना के बगैर आलोचना के अस्तित्व को नकारने वाले यह भूल जाते हैं कि बगैर आलोचना के रचना भी नहीं हो सकती है. प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष के इस संबंध को पहचान नहीं पाने की भूल अक्सर साहित्य से जुड़े लोगों को हो जाती है. रचना और आलोचना को आमने-सामने खड़ा करना भी लगभग अज्ञानता की ही बात है. अगर हम विचार करें तो आलोचना जहां रचना के अंदर की संवेदना के रेशे-रेशे को अलग कर देखने का प्रयत्न है, वहीं रचना में संवेदना अपने अखंड रूप में सृजित होती है. एक जगह पर आकर रचना और आलोचना दोनों मिलती है, वह है भाषा. कई बार जो आनंद रचना की भाषा को पढ़कर होता है, वैसा ही आनंद आलोचना की भाषा में भी प्राप्त होता है. कई बार तो आलोचना को पढ़ते हुए रचना का आस्वाद मिलता है. एक आलोचक ने लिखा भी है – आलोचना रचना है, इसका एक अर्थ यह भी है कि अच्छी आलोचना रचना की तरह ही भाषा का शास्त्रीय नहीं बल्कि सृजनात्मक उपयोग करती है, जिससे उसे पढ़ते समय तक एक स्तर पर

दरअसल आलोचना को जब से नारेबाजी की शक्ल दी गई या जब से आलोचना ने अपनी दृष्टि संकुचित कर ली तब से उसके पाठक कम होने लगे. हमारे आलोचक यह भी भूलने लगे कि आलोचना राजनीति नहीं है, जिसमें समझौते की कोशिश की जाए या दोनों पक्षों की सहूलियतों का ध्यान रखा जाए. आलोचना का रास्ता दायित्व और विवेक का रास्ता है, जिसको बेहतर ढंग से समझकर उसको अपने लेखन में अपनाया जाए. लेकिन मार्क्सवाद के सोवियत संस्करण के प्रभाव में लिखी जानेवाली आलोचना इस बात को समझ नहीं पाई. विचारधारा के जकड़न और गुलामी में लिखी गई आलोचना पथभ्रष्ट होती चली गई. कालांतर में सोवियत मार्क्सवाद के प्रभाव में ज्यादातर आलोचना उद्धरणों की विधा बनकर रह गई.

रचना को पढ़ने का आनंद मिलता है. जैसे रचना की एक रचना प्रक्रिया होती है, वैसे ही निश्चित रूप से आलोचना की भी. उदाहरण के तौर पर नामवर सिंह जब साठ के दशक में नई कहानियों में स्तंभ लिखते थे, तो उस वक्त उसको पढ़ते हुए पाठकों को रचना का आस्वाद मिलता था. इसी तरह से अगर हम विजयदेव नारायण साही का लेख- शमशेर की काव्यानुभूति की बनावट को पढ़ें, तो ऐसा लगता है कि कोई बेहतरीन रचना पढ़ रहे हों. यह लेख सृजनात्मक आलोचना का बेहतरीन नमूना माना जा सकता है. हालांकि कुछ आलोचक इसके कथ्य को लेकर सवाल खड़े करते रहे हैं. इसी तरह से नामवर सिंह की किताब दूसरी परंपरा की खोज भी सृजनात्मक आलोचना का शिखर है. रचनात्मक भाषा को छोड़कर आलोचना ने रूढ़ भाषा को आलिंगनबद्ध कर लिया. इसके अलावा एक और दोष का शिकार हिंदी आलोचना हुई. हिंदी के आलोचकों ने अपने लेखों में अपने पांडित्य का प्रदर्शन करना शुरू कर दिया और एक विदेशी विद्वानों के हवाले से एक ऐसी शब्दावली विकसित कर दी जो हिंदी के आम पाठकों की समझ से बाहर की चीज होने लगी. विश्वविद्यालयों के शिक्षकों का इस तरह की आलोचना में मुख्य योगदान है. पूरी तैयारी के साथ आलोचना लेखन का स्थान सस्सरी तौर पर रचना का परिचय देने और सार संक्षेप बताने तक सीमित होने लगा. यह वैसा ही हुआ कि हाईवे पर जाने की बजाए हिंदी आलोचना ने आसान पगडंडियां ढूंढनी शुरू कर दी, ताकि कठिन रास्ते से जाने का श्रम नहीं करना पड़े. आलोचकों और समीक्षकों ने भी हाल के दिनों में साहस के साथ लिखना छोड़ दिया है. कुछ साल पहले हिंदी की वरिष्ठ आलोचक निर्मला जैन ने कहा था कि अब रचनाकारों में अपनी आलोचना सुनने-पढ़ने का धैर्य नहीं रहा और अपनी रचना के खिलाफ लिखा उनको पसंद नहीं आता है. इस नापसंदगी की मार आलोचक को झेलनी पड़ती है क्योंकि रचनाकार उनसे दुश्मनी पाल बैठते हैं. तब भी मैंने लिखा था कि आलोचक का बिगाड़ के डर से ईमान की बात कहना छोड़ देना साहित्य के लिए अच्छी स्थिति नहीं है.

दरअसल आलोचना को जब से नारेबाजी की शक्ल दी गई या जब से आलोचना ने अपनी दृष्टि संकुचित कर ली तब से उसके पाठक कम होने लगे. हमारे आलोचक यह भी भूलने लगे कि आलोचना राजनीति नहीं है, जिसमें समझौते की कोशिश की जाए या दोनों पक्षों की सहूलियतों का ध्यान रखा जाए. आलोचना का रास्ता दायित्व और विवेक का रास्ता है, जिसको बेहतर ढंग से समझकर उसको अपने लेखन में अपनाया जाए. लेकिन मार्क्सवाद के सोवियत संस्करण के प्रभाव में लिखी जानेवाली आलोचना इस बात को समझ नहीं पाई. विचारधारा के जकड़न और गुलामी में लिखी गई आलोचना पथभ्रष्ट होती चली गई. कालांतर में सोवियत मार्क्सवाद के प्रभाव में ज्यादातर आलोचना उद्धरणों की विधा बनकर रह गई. अगर आप हिंदी के कई आलोचकों का लेखन देखें तो वे विदेशी विद्वानों, विदेशी आलोचकों के एक एक पन्ने का उद्धरण देते हैं, फिर उसको आगे बढ़ाने के लिए एक वाक्य लिखते हैं और फिर एक पन्ने का उद्धरण देते हैं. इस तरह की आलोचना का एक नुकसान यह हुआ कि पाठक उसे पढ़ने के बाद खुद को ठगा हुआ महसूस करने लगा. उसको लगने लगा कि उसने तो अमुक का नाम देखकर किताब खरीदी थी, लेकिन इसमें ज्यादातर राय तो दूसरे या विदेशी विद्वानों की है. इसके अलावा इस पद्धति का एक और दोष जो सामने आया वो ये कि इसने अपनी परंपरा और समृद्ध साहित्यिक विरासत को हाशिए पर डालकर आलोचना की एक ऐसी पद्धति अपनाई जो विदेशी विद्वानों की अवधारणाओं पर आधारित हो गई. विचारधारा विशेष के प्रभाव में लिखी जा रही आलोचना ने जानबूझकर भारतीय क्लासिक्स को दरकिनार करना शुरू कर दिया. उससे उद्धरण लेने की जरूरत ही महसूस नहीं हुई. कोई भी आलोचक यह कहने का साहस नहीं जुटा पाया कि महाभारत पूरी दुनिया में किसी भी भाषा में लिखा गया सबसे बड़ा क्राइम थ्रिलर है. महाभारत का इस आधार पर मूल्यांकन नहीं होने का नतीजा यह रहा कि हमारी विरासत की इस अहम कृति को वैश्विक स्तर पर वो मान्यता नहीं मिल पाई जिसकी वो हकदार है. अब अंग्रेजी के लेखकों ने छोटे-छोटे महाभारत लिखकर शोहरत कमाना प्रारंभ कर दिया है, तब जाकर भी हमारे आलोचकों की तंद्रा भंग नहीं हो पाई है. एक और विवाद उठाने की कोशिश की गई कि हिंदी में रचनाकार आलोचकों की कमी है. रचनाकार आलोचना की ओर नहीं जाते हैं. इसकी वजह को समझने की जरूरत है. रचनाकार जब आलोचना लिखता है तो उसके अवचेतन मन में अपनी खुद की रचना होती है, जो उसको अपने बाड़े से आगे जाने से बार-बार रोकती है जिसका नतीजा उसके लेखन का स्वकेंद्रित हो जाना होता है. अगर आलोचना को एक विधा के तौर पर मजबूत करना है तो उसको विचारधारा की जकड़न, गुलामी से तो मुक्त होना ही होगा, साथ ही उद्धरणों से आगे जाकर अपनी बात कहने का हुनर भी विकसित करना होगा. ■

anant.ibn@gmail.com

कुकुन्दर

परिचय

समस्त भारत में प्रायः आर्द्र एवं नमी प्रधान प्रदेशों में लगभग 1600 मी की ऊंचाई तक प्राप्त होता है. आयुर्वेद के प्राचीन ग्रन्थों में इसका विशेष वर्णन प्राप्त नहीं होता है.

औषधीय प्रयोग मात्रा एवं विधि

- **शिरो रोग-** कुकरौंधा के एक भाग पत्र-स्वरस में 4 भाग पानी मिलाकर क्वाथ बनाकर सिर को धोने से पालित्य रोग में लाभ होता है.
- **नेत्र रोग-** कुकरौंधा पत्र-स्वरस में फिटकरी को घिसकर अंजन करने से नेत्र जाला, नेत्रफूली आदि रोगों में लाभ होता है.
- **मुख रोग-** कुकुन्दर की ताजी मूल को मुख में रखकर चबाने से मुखशोष में लाभ होता है.
- कुकुन्दर कूल का क्वाथ बनाकर गरारा करने से मुखशोष में लाभ होता है.
- 5 मिली कुकरौंधा पत्र-स्वरस में समभाग शहद मिलाकर खिलाने से कफज-विकारों का शमन होता है.
- **कृमि रोग-** 5 मिली कुकुन्दर पत्र-स्वरस का सेवन करने से उदरकृमियों का शमन होता है.
- 5-10 मिली कुकरौंधा पत्र-स्वरस में 1 ग्राम काली मिर्च चूर्ण मिलाकर खिलाने से अतिसार में लाभ होता है.
- **उदरकृमि-** 5 मिली कुकरौंधा पत्र-स्वरस को पिलाने से उदरकृमियों का शमन होता है.
- 2 ग्राम कुकरौंधा पत्र में समभाग काली मिर्च तथा गेंदा पत्र पीसकर और पानी को घोलकर पिलाने से अर्श में लाभ होता है.
- 5 मिली कुकुन्दर स्वरस का सेवन करने से मूत्राघात में लाभ होता है.
- **अस्थिसंधि रोग-** कुकरौंधा के पत्तों को पीसकर लेप करने से संधिवात का शमन होता है.

- **त्वचा रोग-** कुकुन्दर के नवीन पत्र से प्राप्त स्वरस में समभाग मधु मिलाकर त्वक् संक्रमण प्रभावित स्थान पर लगाने से लाभ होता है.
- **जख्म-** कुकरौंधा पत्र-स्वरस को धावन में लगाने से घाव का शोधन होकर शीघ्र भर जाता है.
- कुकरौंधा के पत्रों को पीसकर घाव पर लगाने से घाव पर होने वाले रक्तस्राव का स्तम्भन होता है तथा घाव जल्दी भरता है.
- **फोड़े-फुन्सी-** कुकरौंधा पत्र-स्वरस में श्वेत खदिर को पीसकर लगाने से फोड़े तथा फुंसियों का शमन होता है.
- **कुष्ठ-** कुकरौंधा पत्र के समभाग मूली बीज मिलाकर पीसकर लगाने से कुष्ठ में लाभ होता है.
- **ज्वर-** कुकरौंधा पत्र-स्वरस की 2-2 बूंदों को कान में डालने से ठंड देकर आने वाले ज्वर का शमन होता है.
- कुकरौंधा के 5-10 मिली पत्र-स्वरस में समभाग शहद मिलाकर खिलाने से रक्तपित्त, रक्तातिसार, रक्तार्श तथा रक्तप्रदर में निकलने वाले रक्त का शीघ्र स्तंभन होता है.
- कुकरौंधा के पत्तों को पीसकर, गुनगुना कर शोथ पर लगाने से शोथ का शमन होता है.
- **बाल रोग-** 5 मिली कुकरौंधा पत्र-स्वरस में 65 मिग्रा कपूर मिलाकर पिलाने से शय्यामूत्रता में लाभ होता है. ■

प्रयोज्यांग : पत्र, मूल अथवा पंचांग.
मात्रा : पत्र (स्वरस)-10 मिली. क्वाथ 5-30 मिली या चिकित्सक के परामर्शानुसार.

आचार्य बालकृष्ण

साईं वंदना

सर्वजन हिताय-बाबा

डॉ. चन्द्रभानु सतपथी

मनुष्य एवं अन्य प्रजातियों में कुछ बड़े अंतर हैं. अपनी अत्यन्त विकसित मानसिक क्षमता की श्रेष्ठता के कारण मानव ने इस पृथ्वी पर स्वयं को सबसे अधिक श्रेष्ठ प्रजाति के रूप में प्रमाणित किया. उनमें इस मानसिक क्षमता या बुद्धि का विकास क्रमिक रूप से हुआ. असंख्य प्रकृतिगत एवं जीव-प्रकृति की कई अवस्थाओं को पार कर मनुष्य प्राणी-विकास की श्रेष्ठतम स्थिति में पहुंचा है. वास्तव में जिसे हम 'प्रकृति' कहते हैं, वह 'ब्रह्म' या 'ईश्वर' नामक परम अलौकिक शक्ति का सीमित प्रकटित रूप है. इस प्रकार वह परम् सत्ता ही ब्रह्मांड, सौरमंडल, पृथ्वी आदि में भिन्न-भिन्न रूपों से प्रकटित हुई है. उस परम सत्ता ने जीव-जगत् अर्थात् पक्षी, पशु और अन्ततः मानव की सृष्टि की. इस स्थिति में पहुंचने के लिए जीव को चेतना के विकास की विभिन्न अवस्थाओं से गुजरना होता है.

मानव को छोड़कर अन्य सभी प्राणियों में केवल इंद्रियपरक बुद्धि और ज्ञान होता है, लेकिन मानव में बौद्धिक और चिंतनशील बुद्धि ज्ञान होता है. इस चिंतनशीलता के कारण ही उसके पास दिव्य शक्ति जागृत है. इसलिए कहा गया है कि विवेकहीन प्राणी पशु-समान होता है. यह बौद्धिक/प्रबुद्ध चेतना मानव में कुछ गुणों को उत्पन्न करती है, जैसे कि स्मृति-शक्ति, स्मरण-शक्ति, विश्लेषण करने की क्षमता, जिसमें व्यंग्य करने की क्षमता भी है. मानव के हृदय से दो प्रकार की परस्पर विरोधी भावनाएं पैदा होती है, जैसे कि प्रेम-नफरत, स्वार्थ-त्याग, क्रोध-शांति, असहिष्णुता-धैर्य आदि. मानव के मस्तिष्क की कार्यशक्ति पृथ्वी के सर्वोत्कृष्ट कम्प्यूटर की शक्ति से भी कई गुणा अधिक है. इस बौद्धिक चेतना के कारण पृथ्वी पर मानव-जाति ने अत्यंत विकसित सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक आदि प्रणालियों का निर्माण किया है.

मनुष्य ने अपने बौद्धिक सामर्थ्य से भौतिक जगत् के अत्यन्त सूक्ष्म एवं अंतरिक्ष से वृहत्तम रहस्यों को भी समझने का प्रयास किया है. पिछले दो-तीन दशकों में भौतिक जगत् में अभूतपूर्व एवं क्रांतिकारी प्रगति की एक बाढ़ सी आ गई है, जिसे सबने अनुभव किया है. अंतरिक्ष में भ्रमण, पशुओं की कृंतकी अंगों का प्रत्यारोपण, भू-तलीय खोजें, पदार्थों का सूक्ष्म विश्लेषण, बेतार-संचार, कम्प्यूटर आदि कतिपय ऐसे उदाहरण हैं, जो उद्धत किए जा सकते हैं. इस कारण मानव-सभ्यता में एक क्रांतिकारी परिवर्तन आया है. इस प्रकार प्रकृति में छिपी हुई विभिन्न शक्तियों को नियंत्रण करने की शक्ति भी उसको मिल गई है, जो कि विगत शताब्दियों में ईश्वर-शक्ति मानी जाती थी.

मनुष्य के बौद्धिक-विकास का यह दायरा जितना बढ़ रहा है, उसी अनुपात में मानव के मस्तिष्क पर बोझ भी बढ़ता जा रहा है. हमारे सोचने-समझने की धारा में नई अवधारणाएं/मान्यताएं उत्पन्न हो रही हैं, जिससे कि पुरानी अवधारणाएं या मान्यताएं क्रमशः अर्थहीन होती जा रही हैं. इस द्रुत परिवर्तन के साथ-साथ चलने में आम मनुष्य को कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है, पर नई पीढ़ी की चेतना और बुद्धि कम उम्र से ही इन परिवर्तनों का अनुभव कर रही है. इसलिए इन नई अवधारणाओं को ग्रहण करने में और उनके साथ समझौता करने में उनको कोई कठिनाई नहीं होती. पुरानी पीढ़ी अपने परम्परागत सोचने के तरीकों से निकलने में एक असामंजस्य की स्थिति का अनुभव कर रही है. फलतः विभिन्न पीढ़ियों के लोगों के बीच तालमेल नहीं बैठ पा रहा है और यह असामंजस्य समाज के बहुत से क्षेत्रों में प्रतिबिंबित होता है, जैसे कि स्वार्थपरक व्यक्तिवादिता, माता-पिता एवं बच्चों के बीच की अनबन, वैवाहिक जीवन में कठिनाइयां या संबंध-विच्छेद, जीवन के प्रति निहायत भौतिकवादिता आदि, चारों तरफ एक-दूसरे पर चढ़कर आगे बढ़ने का एक सतत् प्रयास जीवन के सुंदर एवं मधुर पक्षों को नष्ट कर रहा है. इतिहास की पृष्ठभूमि पर अगर आज की स्थिति का आकलन किया जाए, तो पता चलेगा कि इन्हीं अन्तर-विरोधी/परस्पर-विरोधी भावनाओं के कारण रोमन, सिंधु घाटी जैसी अनेक सभ्यताओं का पतन हो गया था.

केवल व्यक्तिगत स्वार्थ पर आधारित समाज कभी ज्यादा समय तक टिक नहीं सकता, जब तक कि वृहत् समाजवादिता को ग्रहण न किया जाए. समाज में रहने वाले हर व्यक्ति में कुछ गुण एवं अवगुण होते हैं. इन गुणों-अवगुणों को समूह-रूप से ग्रहण कर सहनशीलता से आचरण करने से ही समाज आगे बढ़ सकता है और मजबूत हो सकता है. चाहे किसी भी देश या धर्म के हों, सभी संत समाज की भलाई के लिए इन्हीं बातों को दोहराते रहे. शिरडी के साईं बाबा ने अपने भक्तों को यही शिक्षा दी है- न केवल उपदेश द्वारा अपितु उदाहरण द्वारा भी. विभिन्न जाति, धर्म, पंथ और सामाजिक-आर्थिक स्तर के लोगों को इस मानववादिता के ध्वज के नीचे लाने में वे ही समर्थ थे. उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में भारत के लोग विभिन्न जाति, धर्म, भाषा में बंटे हुए थे. उनको एक पावन भाव-धारा में लाकर बाबा ने उन्हें ईश्वराभिमुखी किया और केवल मानववादिता ही नहीं, अपितु प्राणीवादिता की शिक्षा भी प्रदान की. आज की जटिल सामाजिक परिस्थिति में यह आवश्यक है कि सद्गुरु श्री साईंनाथ महाराज की इन्हीं शिक्षाओं पर अमल करें, ताकि कल का जीवन मधुर और शांतिमय हो सके. ■

चौथी दुनिया यूट्यूब

feedback@chauthiduniya.com

साईं भक्तों! आप भी चौथी दुनिया को साईं से जुड़ा लेख या संस्मरण भेज सकते हैं. मसलन, साईं से आप कब और कैसे जुड़े. साईं की कृपा आपको कब से मिलनी शुरू हुई. आप साईं को क्यों पूजते हैं. कैसे बनें आप साईं भक्त. साईं बाबा का जीवन और चरित्र आपको किस तरह से प्रेरित करता है? साईं बाबा के बारे में अनेक किंवदंतियां हैं. क्या आपके पास भी कुछ कहने के लिए है? अगर हां, तो केवल 600 शब्दों में अपनी बात कहने की कोशिश करें और नीचे दिए गए पते पर भेजें.

फुटबॉल के बेताज बादशाह हैं मेसी

सैयद मोहम्मद अब्बास

हर खेल में कोई न कोई स्टार होता है. उसी के दम पर मैच का रुख तय होता है. क्रिकेट को छोड़ अन्य खेलों में भी सचिन और विराट जैसी शख्सियत के रूप में कई खिलाड़ी मौजूद हैं, जिनके प्रदर्शन की बदौलत टीम जीत का दम भरती है. फुटबॉल में मेसी कोई नया नाम नहीं हैं, लेकिन उनका बेजोड़ खेल किसी करिश्मे से कम नहीं है. विश्व फुटबॉल जगत में मेसी अपने प्रदर्शन से लगातार लोगों का दिल जीत रहे हैं. संन्यास के बाद मैदान पर दोबारा लौटने वाले इस खिलाड़ी ने एक बार फिर गोलों की बौछार करनी शुरू कर दी. खराब प्रदर्शन के बाद संन्यास लेने वाले मेसी के बगैर उनकी टीम अर्जेंटीना भी अधूरी लग रही थी. लियोनेल मेसी ने पिछले साल जून में कोपा अमेरिका के फाइनल में मिली हार के बाद फुटबॉल से किनारा कर लिया था. इसके बाद उन्होंने अपने प्रशंसकों के दबाव में आकर खेल में लौटने का फैसला कर लिया. मेसी की यह विडंबना है कि वे उम्मीद के मुताबिक अपने देश के लिए प्रदर्शन नहीं कर सके हैं, चाहे वह विश्व कप हो या अन्य कोई बड़ा टूर्नामेंट. फुटबॉल जगत में ऐसे कई बड़े खिलाड़ी हैं, जो अपनी काबिलियत से विश्व में अपनी अलग पहचान बनाए हुए हैं. रोनाल्डो से लेकर नेमार तक ऐसे खिलाड़ी हैं, जो मैदान पर अपनी उपस्थिति से विरोधियों के होश उड़ाने का माद्दा रखते हैं. मेसी भी ऐसे ही खिलाड़ी हैं, जिन्हें मैदान पर रोकने के लिए विरोधी टीम तरह-तरह के हथकंडे अपनाती है. बार्सिलोना टीम की तरफ से खेल रहे मेसी अपने खेल से सबको चौंका रहे हैं. मेसी की बदौलत बार्सिलोना टीम ला लिगा फुटबॉल टूर्नामेंट में लगातार चमक रही है.

फुटबॉल के सर्वकालिक महान खिलाड़ियों में अपना नाम दर्ज कराने वाले मेसी को एक खतरनाक स्ट्राइकर के रूप में जाना जाता है. बार्सिलोना के लिए उन्होंने कई बार यादगार प्रदर्शन किए हैं. इतना ही नहीं, बार्सिलोना टीम की तरफ से सबसे ज्यादा गोल करने का रिकॉर्ड भी उनके नाम है. मेसी ने साल 2012 में शानदार फुटबॉल का प्रदर्शन करते हुए 91 गोल कर साल में सबसे ज्यादा गोल करने का रिकॉर्ड भी बनाया. अर्जेंटीना के अलावा बार्सिलोना क्लब से खेलने वाले मेसी ने अंतरराष्ट्रीय करियर के साथ-साथ क्लब फुटबॉल में भी खूब नाम कमाया है.

फुटबॉल के सर्वकालिक महान खिलाड़ियों में अपना नाम दर्ज कराने वाले मेसी को एक खतरनाक स्ट्राइकर के रूप में जाना जाता है. बार्सिलोना के लिए उन्होंने कई बार यादगार प्रदर्शन किए हैं. इतना ही नहीं, बार्सिलोना टीम की तरफ से सबसे ज्यादा गोल करने का रिकॉर्ड भी उनके नाम है. मेसी ने साल 2012 में शानदार फुटबॉल का प्रदर्शन करते हुए 91 गोल कर साल में सबसे ज्यादा गोल करने का रिकॉर्ड भी बनाया. अर्जेंटीना के अलावा बार्सिलोना क्लब से खेलने वाले मेसी ने अंतरराष्ट्रीय करियर के साथ-साथ क्लब फुटबॉल में भी खूब नाम कमाया है. उनके शानदार प्रदर्शन की बदौलत उन्हें पांच बार फुटबॉल का सर्वश्रेष्ठ खिलाड़ी होने का अवॉर्ड भी मिला है. फुटबॉल में अक्सर मेसी और रोनाल्डो के बीच तुलना की जाती है. दोनों में से कौन सर्वश्रेष्ठ खिलाड़ी हैं, इसे लेकर हमेशा बहस होती रही है. दोनों के आंकड़े भी इस बात के गवाह हैं कि दोनों विश्व फुटबॉल में अव्वल हैं. साल 2016-2017 सत्र की बात की जाए तो मेसी ने 39 जबकि रोनाल्डो ने 26 गोल दागे हैं. ला लिगा फुटबॉल में मेसी ने 23 गोल किए हैं, जबकि रोनाल्डो ने 19 गोल किए. मेसी के करियर पर नजर दौड़ाई जाए तो उन्होंने अपने देश यानी अर्जेंटीना के अब तक 116 मैचों में केवल 57 गोल किए हैं जबकि बार्सिलोना की तरफ से खेलते हुए अब तक 569 मैचों में 492 गोल किया है. इस तरह से 685 मैचों में 549 गोल कर विश्व फुटबॉल में अपनी अलग पहचान बनाई है. कुल मिलाकर यह देखना अब रोचक होगा कि वह अपने देश अर्जेंटीना के लिए क्या करते हैं. उनपर यह आरोप हमेशा से लगता रहा है कि क्लब फुटबॉल में उनका लोहा पूरी दुनिया देख चुकी है, लेकिन अपने देश की तरफ से खेलते हुए उनका प्रदर्शन हमेशा विवादों के घेरे में रहा है. माराडोना के बाद मेसी अर्जेंटीना के लिए एक चमत्कारी फुटबॉलर के रूप में सामने आए हैं, लेकिन अभी उन्हें माराडोना जैसा साबित करने के लिए और बेजोड़ फुटबॉल का प्रदर्शन करना होगा. यह बात अलग है कि दोनों खिलाड़ी अपने-अपने वक्त के सबसे धाकड़ खिलाड़ी के रूप में देखे जाते हैं. ■

ऑस्ट्रेलियाई खिलाड़ियों की रग-रग में स्लेजिंग भरी है

क्रिकेट में स्लेजिंग यानी छींटाकशी कोई नई बात नहीं है. एक वक्त था जब खिलाड़ी स्लेजिंग जैसी चीज से दूर रहते थे लेकिन मौजूदा समय में दुनिया की हर बड़ी टीम स्लेजिंग के दम पर अपने प्रदर्शन को चमकाने की पूरी कोशिश करती है. मैदान पर उसका सारा खेल स्लेजिंग यानी छींटाकशी पर लगा रहता है. दरअसल अगर कोई खिलाड़ी बल्ले से जोरदार खेल दिखा रहा है तो गेंदबाज छींटाकशी के सहारे उस बल्लेबाज का ध्यान भंग करने के लिए स्लेजिंग का सहारा लेने की फिराक में दिखता है. अक्सर खिलाड़ी विपक्षी टीम के खिलाड़ी को उकसाने का काम करते हैं. इसके चलते खिलाड़ियों का प्रदर्शन भी प्रभावित होता है. हाल के दिनों में यह घटना ज्यादा देखने को मिली है. इसे रोकने के लिए फुटबॉल की तरह रेड और यलो कॉर्ड दिखाने की बात कही जा रही है. हाल में मेलबोर्न क्रिकेट क्लब ने इसकी सिफारिश तक कर डाली है. विश्व की कई बड़ी टीमें खेल के साथ-साथ छींटाकशी जैसे गंदे खेल के लिए भी जानी जाती हैं. उसमें सबसे ज्यादा ऑस्ट्रेलिया और किसी जमाने में पाकिस्तान टीम भी अव्वल रही है. मौजूदा भारत और ऑस्ट्रेलियाई सीरीज में छींटाकशी चरम पर देखी जा सकती है. कंगारू खिलाड़ी लगातार मैदान पर दबाव बनाने के लिए स्लेजिंग जैसी घातक चीज का सहारा लेते दिख रहे हैं. इतना ही नहीं, स्मिथ की टीम इंडियन टीम पर मैदान पर दबाव बनाने के लिए सारी हदों को पार करने की कोशिश में है. दूसरी ओर भारतीय खिलाड़ी भी कंगारुओं को उसकी जुबान में जवाब देने की कोशिश में हैं. ताजा मामला इशांत शर्मा का है, जिन्होंने अपने ही अंदाज में ऑस्ट्रेलियाई कप्तान को मुंह चिढ़ाकर यानी अजीब सी शक्ल बनाकर कंगारू खिलाड़ियों पर दबाव बनाने की कोशिश की. इतना ही नहीं मौजूदा सीरीज में दोनों ही टीमों के खिलाड़ियों की जुबानी जंग भी तेज होती दिख रही है. जानकारों की मानें तो कंगारू टीम स्लेजिंग जैसे खेल की जनक रही है. इससे पूर्व भी कई बार कंगारू टीम के खिलाड़ियों ने खेल से ज्यादा छींटाकशी जैसे खेल पर भरोसा किया है. मैदान पर अपशब्द कहना ऑस्ट्रेलियाई खिलाड़ियों की आदत में शुमार है. विकेट पाने के लिए बल्लेबाजों को गाली देने से भी परहेज नहीं करते हैं कंगारू खिलाड़ी. अतीत में कई ऐसे प्रमाण मिलेंगे जो क्रिकेट की मर्यादा को छलनी करते आए हैं.

ऐसा नहीं है कि छींटाकशी पहली बार की जा रही है. इतिहास में कई और टीमें हैं, जो छींटाकशी के लिए जानी जाती हैं. मैदान पर भारत और पाकिस्तान के बीच मुकाबला अक्सर छींटाकशी तक पहुंच जाता है. 90 के दशक में भारतीय टीम अक्सर पाकिस्तान के खिलाफ छींटाकशी का शिकार होती रही है. 1996 के विश्व कप में भारत और पाकिस्तान के खिलाफ मैच में छींटाकशी तब देखी गई, जब मुकाबला बेहद रोमांचक दौर में था. भारतीय टीम उस मैच में अच्छा स्कोर बनाने के बाद जीत का दावा कर रही थी, लेकिन मैदान पर आमिर सोहेल टीम इंडिया के गेंदबाजों पर कहर बनकर टूट रहे थे. आमिर सोहेल ने उस जमाने में स्विंग गेंदबाज वेंकटेश प्रसाद की एक गेंद पर चौका जड़कर उनकी तरफ बैट दिखाते हुए कुछ कहा. इसके बाद वेंकटेश ने उनको बोल्ड कर करारा जवाब दिया. इससे पूर्व जावेद मियांदाद ने भी 1992 विश्व कप में भारतीय खिलाड़ियों पर छींटाकशी की थी. बात अगर ऑस्ट्रेलियाई खिलाड़ियों की करें तो इसमें कई चौंकाने वाले बड़े नाम मिलेंगे, जो अपने खेल के स्तर को बढ़ाने के लिए स्लेजिंग जैसी चीज का सहारा लेते दिखेंगे. शुरुआती दौर में कंगारू खिलाड़ियों की स्लेजिंग के शिकार मशहूर खिलाड़ी सुनील गावस्कर को भी होना पड़ा था. गावस्कर ने इस बात का खुलासा अपनी किताब में किया है. माना जाता है कि उस जमाने में ऑस्ट्रेलियाई टीम के धाकड़ गेंदबाज डेनिस लिली और चैपल बंधु जैसे क्रिकेटर मैदान पर अपने शानदार खेल के अलावा खराब बर्ताव के लिए भी सुर्खियों में रहते थे. बाद में आगे चलकर यही सबकुछ पोर्टिंग की कप्तानी में ऑस्ट्रेलियाई टीम में देखा जा सकता था. भारत और ऑस्ट्रेलिया के बीच सीरीज में भज्जी और सायमंड्स की लड़ाई भी खूब चर्चा का विषय बनी. साल 2008 में ऑस्ट्रेलियाई दौरे पर खेल से ज्यादा भज्जी और सायमंड्स के बीच की तकरार सामने आई थी. मैदान पर दोनों ही खिलाड़ी आपस में भिड़ते दिखे. इतना ही नहीं,

> भारतीय टीम विराट की कप्तानी में लगातार अच्छा क्रिकेट खेल रही है. ऐसे में कंगारुओं को लगता है कि वे मैदान में भारत को क्रिकेट से नहीं हरा सकते हैं. इस कारण उन्होंने अपनी तेज जुबान का सहारा लिया है. वे लगातार अपनी खराब भाषा का इस्तेमाल कर रहे हैं. ऐसे में टीम इंडिया को यहां पर थोड़ा धैर्य दिखाना होगा, नहीं तो कंगारू अपनी चाल में कामयाब हो सकते हैं. दूसरी ओर भारतीय खिलाड़ी, खासकर विराट कोहली भी मैदान पर बेहद आक्रामक दिखते हैं, जो कंगारू टीम को मुंहतोड़ जवाब देने के लिए काफी है.

इसी दौरे पर ऑस्ट्रेलियाई खिलाड़ी खुलेआम भारतीय खिलाड़ियों को मैदान पर अपशब्द कहते भी दिखे. वहीं, कुछ खिलाड़ी ऐसे भी होते हैं जो मैदान पर स्लेजिंग का जवाब अपने बल्ले अथवा गेंदबाजी से विपक्षी टीम को देते हैं. एक बार तो दक्षिण अफ्रीकी तेज गेंदबाज को नेल को उन्हीं के अंदाज में जवाब दिया. श्रीसंत ने छक्का जड़ने के बाद जो किया, उसे देख पूरी क्रिकेट दुनिया हतप्रभ रह गई थी. मौजूदा दौर में भारतीय टीम विराट की कप्तानी में लगातार अच्छा क्रिकेट खेल रही है. ऐसे में कंगारुओं को लगता है कि वे मैदान में भारत को क्रिकेट से नहीं हरा सकते हैं. इस कारण उन्होंने अपनी तेज जुबान का सहारा लिया है. वे लगातार अपनी खराब भाषा का इस्तेमाल कर रहे हैं. ऐसे में टीम इंडिया को यहां पर थोड़ा धैर्य दिखाना होगा, नहीं तो कंगारू अपनी चाल में कामयाब हो सकते हैं. दूसरी ओर भारतीय खिलाड़ी, खासकर विराट कोहली भी मैदान पर बेहद आक्रामक दिखते हैं, जो कंगारू टीम को मुंहतोड़ जवाब देने के लिए काफी है. खैर मैदान पर कुछ भी हो, खिलाड़ियों को स्लेजिंग जैसे अमर्यादित आचरण से दूर रहना चाहिए क्योंकि खेल भावना सबसे अहम मानी जाती है. ■

feedback@chauthiduniya.com

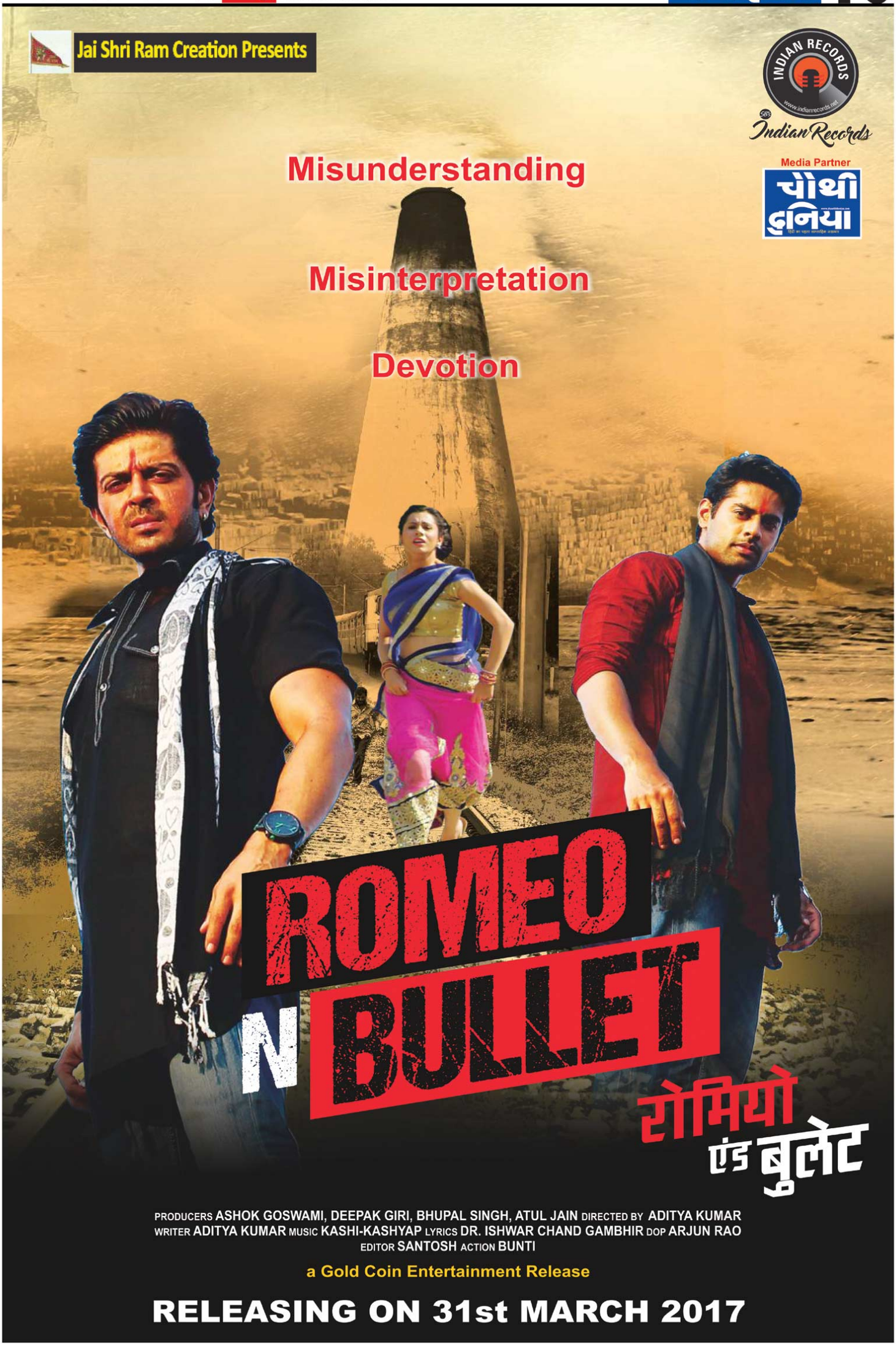
Jai Shri Ram Creation Presents
INDIAN RECORDS
www.indianrecords.net
Indian Records
Media Partner
चौथी दुनिया
Misunderstanding
Misinterpretation
Devotion
ROMEO N BULLET
रोमियो एंड बुलेट
PRODUCERS ASHOK GOSWAMI, DEEPAK GIRI, BHUPAL SINGH, ATUL JAIN DIRECTED BY ADITYA KUMAR
WRITER ADITYA KUMAR MUSIC KASHI-KASHYAP LYRICS DR. ISHWAR CHAND GAMBHIR DOP ARJUN RAO
EDITOR SANTOSH ACTION BUNTI
a Gold Coin Entertainment Release
RELEASING ON 31st MARCH 2017